RNI. No. BIHHIN/2021/80855

सीमांचल की आवाज़

जनवरी 2026 // वर्ष 05 // अंक // 12

₹20/-

राष्ट्रीय हिन्दी मासिक पत्रिका

जिद सच कहने की...

जलवायु परिवर्तन

वन्यजीवों को खतरा

दिल्ली

अपनी ही तरक्की से घुट रहा है दम

ना पक्ष, ना विपक्ष

सिर्फ निष्पक्ष

क्योंकि हमें जिद है सच कहने की...

सीमांचल की
आवाज़
ज़िद सच कहने की...

मो0 अजहर रहमानी

सम्पादक

सीमांचल की आवाज़

ज़िद सच कहने की...

वर्ष : 05 अंक : 12 पृष्ठ : 52 मूल्य : 20 रुपए

संपादक : मो0 अजहर रहमानी
संपादकीय सलाहकार : अरविंद अग्रवाल
उप संपादक : ब्रजेश झा
मीडिया कार्यकारी : पीयूष कुमार
एक्सक्यूटिव ऑफिसर : गुलाम सरवर मेहंदी
क्रिएटिव हेड : अनवर आलम
कला एवं साहित्य सहयोग : मुरली मनोहर श्रीवास्तव
विशेष सहयोगी : अविनाश कुमार झा
फीचर एडिटर : लोकहर्ष
विशेष संवाददाता : मो0फरहान

ब्यूरो :-
बिहार : मो0असद
दिल्ली : स्वाति सिंह
कोलकाता : रफ्त नसीम
मुंबई : फैज अकरम
यूपी : निशात चौरसिया
पश्चिम बंगाल: मरगुब सालीक
सीमांचल : प्रदीप कुमार
फोटो रिर्सचर: अविनाश चन्द्रा
बिजनेस हेड: मो0 आसिफ रहमानी
विधि सलाहकार : इम्तियाज अली, वरीय अधिवक्ता
सभी पद अवैतनिक और अंशकालिक हैं।

संपादकीय कार्यालय

रोज मार्केट, पश्चिमपाली, कॉलेज रोड़, किशनगंज
Email :-
editorseemanchakiawaz@gmail.com
website : seemanchalkiawaz.in
seemanchalkiawaz.com
contact : 06456-291139
Mob. : 9973992786, 9546786806

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक मो0अजहर रहमानी द्वारा 'अक्सा एडवरटाईजिंग', दफ्तरी होम इंटेरियर, पश्चिम पाली, पोस्ट ऑफिस पुलिस स्टेशन एवं जिला किशनगंज - 855108 (बिहार) द्वारा मुद्रित एवं रुई धासा, खानका पुलिस स्टेशन एवं जिला किशनगंज - 855108 (बिहार) से प्रकाशित।

RNI. No. BIHHIN/2021/80855

पत्रिका में छपे समाचार एवं लेखों पर संपादक की सहमति हो अनिवार्य नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में हमारा न्याय क्षेत्र किशनगंज होगा।
आलेख पर कोई आपत्ति हो तो एक महीने के भीतर खंडन करें। किसी भी लेख के लिए रचनाकार स्वयं जिम्मेदार होंगे। विज्ञापन की सत्यता की जांच पाठक स्वयं अपने स्तर पर कर लें। फोटो - समाचार भी (माध्यम इंटरनेट एवं अन्य स्रोत)
आपको हमारा ये अंक कै सा लगा, हमें जरूर लिखें हमने कोशिश की है कि राज्य, राष्ट्रीय, अन्तराष्ट्रीय और आप से जुड़ी हर महत्वपूर्ण जानकारी आप तक पहुंचाए। हमें आपको सुझाव का बेसब्री से इंतजार रहेगा।

स्टोरी
दिल्ली की आवाज

08 दिल्ली एक शहर अपनी ही तरक्की से घुट..

वायु प्रदूषण का संकट - खासकर सर्दियों के महीनों में - खतरनाक स्तर पर पहुंच गया है, जिससे अदालतों, सरकारों और नागरिकों को एक ऐसे पर्यावरणीय आपातकाल का सामना करना पड़ रहा है जिसे अब नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। बिगड़ती हवा की गुणवत्ता सिर्फ एक पर्यावरणीय मुद्दा नहीं है; यह बच्चों, बुजुर्गों और अन्य कमजोर आबादी...

राजनीति

10 नितिन नबीन युवा नेतृत्व के प्रतीक

युवा नेता को शीर्ष पद पर बैठाना यह प्रदर्शित कर रहा है कि भाजपा अब अगली पीढ़ी के नेतृत्व पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रही है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पहले ही यह कहता रहा है कि भाजपा को भविष्य के नेतृत्व पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

राजनीति

16 बाबरी मस्जिद बंगाल में भाजपा का खेल बिगाड़...

सवाल यह है कि हुमायूं टीएमसी के कितने वोट अपनी संभावित पार्टी के खाते में डाल सकते हैं। मेरा मानना है कि सिर्फ एक भावनात्मक मुद्दे के सहारे ममता बनर्जी जैसी नेता को पटकनी देना संभव नहीं है। पिछले 15 साल से ममता बनर्जी के साथ मजबूती से जुड़े हुए....

लेख

30 मनरेगा से विकसित भारत सिर्फ नाम बदला या...

सबसे बड़ा और विवादास्पद बदलाव फंडिंग पैटर्न में है। मनरेगा के तहत केंद्र सरकार 90% और राज्य सरकार 10% खर्च वहन करती थी। रिपोर्ट्स के मुताबिक, नए कानून में केंद्र अपनी हिस्सेदारी घटाकर 60% कर सकता है, जबकि राज्यों को 40% खर्च उठाना होगा।

विचार विमर्श

42 भारतः जनसंहारों से चिंतित दुनिया को प्रेरणा देता...

मौजूदा दौर में समूची दुनिया में लगातार गहराती हिंसा, युद्ध, जातीय संघर्ष और धार्मिक उन्माद चिंता का विषय बने हुए हैं। कई देशों में आम नागरिक सीधे निशाने पर हैं. कहीं घर उजड़ रहे हैं और कहीं सत्ता के संघर्ष में निर्दोष लोग खलि चढ़ रहे हैं। इस वैश्विक चिंता के दौर में हाल ही में जनसंहार...

Advertisement Tariff

SEEMANCHAL KI AWAZ

राष्ट्रीय हिन्दी मासिक पत्रिका

DISPLAY

REGULAR DISPLAY (B&W)
Rs. 200/- per sq. cm.

REGULAR DISPLAY (COLOUR)
Rs. 400/- per sq. cm.

TENDER NOTICE
Rs. 275/- per sq. cm.

COMPANY /FINANCIAL /AUCTION NOTICE ETC.
Rs. 280/- per sq. cm.

CLASSIFIED

- Change of Name
- Lost & Found
- Wanted Etc.

Upto 20 Words - Rs. 100/-

Every Extra Word - Rs. 5/- Per Word

Mechanical Data

No. of Pages - 52 Columns Per Page - 03 Column
Width of Column 5.1 cm. - Length of Column 29 cm.

Special Position

Last Cover	(Minimum 22 cm.x28 cm.)	75% Extra
Iner Cover	(Minimum 22 cm.x28 cm.)	60% Extra
Special Guaranteed Position/Page 25% Extra		

GIVE MULTIPAL EXPOSURE TO YOUR ADVT.

For Further Details Please Contact

SEEMANCHAL KI AWAZ
RUIDHASA KHANQUAH, KISHANGANJ, BIHAR-855108
Mob. 9973992786, E-mail - editorseemanchalkiawaz@gmail.com

सम्पादकीय

नया साल, नई सोच

हर बारह महीने बाद हमारे सामने एक ताजा कैलेंडर बिलकुल कोरा कैनवास तथा इंद्रधनुष के रंग लेकर आता है। एक जनवरी यह कोई साधारण दिवसांक परिवर्तन नहीं, बल्कि एक मनोवैज्ञानिक प्रस्थान बिंदु है, जो हमें रुककर सोचने, ठहरकर पीछे मुड़कर देखने और फिर से नए संकल्प के साथ शुरू करने का साहस देता है। यह वह अवसर है जब हम अपने पिछले अनुभवों को एक संदर्भ के रूप में संजोते हुए भी, उनके बोझ से अपने मन को मुक्त कर सकते हैं। हर नए साल की पहली सुबह हवा में एक अलग सी ताजगी, आशा की एक नई लय और संभावनाओं का एक अनूठा संगीत लेकर आती है। इसी लिए इस दिन को दुनियां भर में उत्सव की तरह उत्साह से मनाया जाता है। लेकिन क्या यह सब परिवर्तन अपने आप हो जाता है? नहीं, यह तभी सार्थक बनता है जब हम खुद अपनी सोच की दिशा और दशा बदलने का निश्चय करते हैं।

जीवन अनिश्चितताओं से भरा है, और पुरानी, कठोर सोच मुसीबत में टूट जाती है, जबकि नई और लचीली सोच झुकती जरूर है, लेकिन टूटती नहीं। यह अनुकूलन की क्षमता विकसित करती है। इसमें अतीत की कमियां गिनाने के बजाय, जो मिला है उसके प्रति कृतज्ञ होना और दूसरों के प्रति उदार दृष्टिकोण रखना भी शामिल है।

हमारी सोच अक्सर आदतों के पिंजरे में कैद होती है। हम वही रास्ते चुनते हैं, वही प्रतिक्रियाएं देते हैं और वही डर साथ लेकर चलते हैं। यह पुरानी सोच एक ऐसा आरामदायक कोना बना देती है जहां से बाहर झांकना भी मुश्किल लगता है। नकारात्मकता, हार मान लेने की मानसिकता और असफलताओं का बोझ , ढर्रे पर जिंदगी, ये सब हमारी रफ्तार के रोकते हैं। पर नया साल हमें याद दिलाता है कि समय बदल रहा है, और बदलना ही प्रगति के लिए जीवन का सार है। तो क्यों न हम भी अपनी सोच को नई दिशा दें? नई सोच का अर्थ यह नहीं कि पुरानी हर बात को नकार दिया जाए बल्कि यह एक विवेकपूर्ण संतुलन है। इसमें अतीत के सबक को साथ लेकर, वर्तमान में जीते हुए, भविष्य के लिए एक लचीली, सकारात्मक और समाधान-उन्मुख मानसिकता का विकास करना होता है। यह सबसे पहले हमारे नजरिए में बदलाव लाती है। एक ही स्थिति को हम समस्या के रूप में देखें या चुनौती के रूप में, यह हमारी सोच तय करती है। नई सोच ₹क्यों नहीं हो सकता₹ के स्थान पर ₹कैसे हो सकता है₹ पर केंद्रित होनी चाहिए , जो आशा की किरण को जिंदा रखती है। साथ ही, यह हमें जिज्ञासु बनाए रखती है, नई चीजें सीखने के लिए हमें प्रेरित करती है और हमें यह एहसास दिलाती है कि गलतियां असफलताएं नहीं, बल्कि सीखने के सोपान हैं। जीवन अनिश्चितताओं से भरा है, और पुरानी, कठोर सोच मुसीबत में टूट जाती है, जबकि नई और लचीली सोच झुकती जरूर है, लेकिन टूटती नहीं। यह अनुकूलन की क्षमता विकसित करती है। इसमें अतीत की कमियां गिनाने के बजाय, जो मिला है उसके प्रति कृतज्ञ होना और दूसरों के प्रति उदार दृष्टिकोण रखना भी शामिल है।

लेकिन यह बदलाव रातों-रात नहीं आता। नए साल की शुरूआत इसे आरंभ करने का एक शुभ अवसर जरूर है। बड़े-बड़े संकल्पों के बोझ तले दबने की बजाय, एक छोटी, सकारात्मक आदत से शुरूआत करें। जैसे, रोजाना पांच मिनट शांत बैठकर अपने खुद के साथ रहना, एक अच्छी किताब के कुछ पन्ने पढ़ना, या दिन की शुरूआत तीन अच्छी बातें गिनकर करना। जब भी मन कहे ₹यह मेरे बस की बात नहीं₹, तो एक बार खुद से पूछें, ₹क्या इसे करने का कोई एक छोटा तरीका हो सकता है?₹ सोशल मीडिया की नकारात्मकता और तुलना की दुनिया से अवकाश लेकर, उस समय को अपने शौक, परिवार या स्वयं के साथ बिताएं। अपने से अलग विचार रखने वालों की बात बिना कटुता के सुनने का प्रयास करें, इससे हमारा दृष्टिकोण व्यापक होता है। और सबसे महत्वपूर्ण, अपनी कमियों के प्रति आलोचनात्मक होने के बजाय, स्वयं से वैसी ही प्रोत्साहन की भाषा बोलें जैसी किसी प्रिय मित्र से बोलते हैं।

तो आइए, इस नए साल पर हम केवल नए कपड़े, नए साजो-सामान, चमक धमक ही नहीं, बल्कि एक नया दृष्टिकोण भी स्थाई रूप से धारण करें। उस सोच को अपनाएं जो बदलाव से नहीं डरती, जो सीखने के लिए हमेशा तैयार रहती है और जो हर स्थिति में एक संभावना की तलाश करती है क्योंकि सच तो यह है कि नया साल कोई जादू की छड़ी नहीं है, बल्कि एक नई शुरूआत के लिए हमारे अपने मन का बनाया हुआ एक सुंदर बहाना है। यह बहाना, अगर हम चाहें, तो हमारे जीवन की सबसे सुंदर कहानी का पहला वाक्य बन सकता है। आपकी सोच नई हो, आपका नजरिया उज्ज्वल हो और यह नया साल आपके जीवन में अनगिनत नई खुशियां, नई सफलताएं और नई संभावनाएं लेकर आए। शुभ नववर्ष ।

-मो0 अजहर रहमानी

दिल्ली

एक शहर अपनी ही तरक्की से घुट रहा है दम

● डेस्क

दिल्ली, जिसे कभी नियोजित इंफ्रास्ट्रक्चर और ग्रीन बफर के साथ एक संतुलित राष्ट्रीय राजधानी के रूप में देखा गया था, आज दुनिया के सबसे प्रदूषित और भीड़भाड़ वाले शहरों में से एक है। पिछले एक दशक में, बड़े पैमाने पर निर्माण कार्य, अनियंत्रित जनसंख्या वृद्धि, निजी वाहनों के स्वामित्व में तेजी से वृद्धि, अपर्याप्त अपशिष्ट प्रबंधन प्रणाली, और सड़कों और आवासीय कॉलोनियों पर भारी दबाव ने मिलकर दिल्ली को एक घनी आबादी वाले शहरी फैलाव में बदल दिया है जो सांस लेने के लिए संघर्ष कर रहा है।

वायु प्रदूषण का संकट - खासकर सर्दियों के महीनों में - खतरनाक स्तर पर पहुंच गया है, जिससे अदालतों, सरकारों और नागरिकों को एक ऐसे पर्यावरणीय आपातकाल का सामना करना पड़ रहा है जिसे अब नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। बिगड़ती हवा की गुणवत्ता सिर्फ एक पर्यावरणीय मुद्दा नहीं है; यह बच्चों, बुजुर्गों और अन्य कमजोर आबादी के लिए गंभीर दीर्घकालिक परिणामों के साथ एक सार्वजनिक स्वास्थ्य आपदा में बदल गया है।

इस गंभीर पृष्ठभूमि में, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने 17 दिसंबर, 2025 को कड़े अवलोकन और तत्काल निदेशों के साथ हस्तक्षेप किया, जो प्रशासनिक निष्क्रियता और खंडित प्रवर्तन तंत्र के प्रति न्यायिक अधीरता को दशार्ता है।

सुप्रीम कोर्ट का हस्तक्षेपः ट्रैफिक और टोल प्लाजा पर फोकस

दिल्ली-एनसीआर में बिगड़ते वायु प्रदूषण के स्तर को गंभीरता से लेते हुए, सुप्रीम कोर्ट ने भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण और दिल्ली नगर निगम

सहित प्रमुख नागरिक और इंफ्रास्ट्रक्चर प्राधिकरणों को कई निर्देश जारी किए। कोर्ट ने इन प्राधिकरणों को दिल्ली की सीमाओं पर स्थित टोल प्लाजा को अस्थायी रूप से बंद करने, स्थानांतरित करने या तर्कसंगत बनाने की व्यवहार्यता की तत्काल जांच करने का निर्देश दिया।

भारत के मुख्य न्यायाधीश सूर्यकांत, न्यायमूर्ति जॉयमाल्य बागची और न्यायमूर्ति विपुल पंचोली की पीठ को सूचित किया गया कि टोल संग्रह बिंदु - विशेष रूप से गुड़गांव जैसे सीमावर्ती स्थानों पर एमसीडी द्वारा संचालित - भारी ट्रैफिक जाम का कारण बन रहे थे। कथित तौर पर वाहन घंटों तक लंबी कतारों में फंसे रहते थे, जिसके परिणामस्वरूप इंजन चालू रहते थे, अत्यधिक ईंधन की खपत होती थी, और वाहनों से होने वाले उत्सर्जन में तेजी से वृद्धि होती थी।

कोर्ट ने इस बात पर जोर दिया कि ऐसी प्रशासनिक बाधाएं सीधे प्रदूषण में योगदान करती हैं और किसी भी गंभीर शमन रणनीति के हिस्से के रूप में इन्हें संबोधित किया जाना चाहिए।

एक दशक का अनियंत्रित शहरीकरण और निर्माण धूल

2011 की जनगणना के अनुसार, दिल्ली की उचित आबादी 11 मिलियन से अधिक थी, जबकि राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र की आबादी लगभग 16.8 मिलियन थी, जो दिल्ली को भारत का दूसरा सबसे अधिक आबादी वाला शहर और एशिया का सातवां सबसे अधिक आबादी वाला शहरी समूह बनाता है। हालांकि, इस तेजी से बढ़ती आबादी के साथ, दिल्ली को एक और भी ज्यादा परेशान करने वाली पहचान मिली है - दुनिया के सबसे प्रदूषित शहरों में से एक होने की।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 2014 के अपने ग्लोबल एयर क्वालिटी असेसमेंट में दिल्ली को दुनिया का सबसे प्रदूषित शहर घोषित किया था। हालांकि बाद में WHO के 2016 के शहरी एयर क्वालिटी डेटाबेस में शहर को ग्यारहवें सबसे खराब स्थान पर कर दिया गया, लेकिन इस मामूली सुधार से लगातार चल रहे पब्लिक हेल्थ संकट में कोई खास राहत नहीं मिली। डेटा प्रगति को नहीं, बल्कि दिल्ली की प्रदूषण समस्या के पुराने और सिस्टमैटिक नेचर को दिखाता है।

पिछले एक दशक में, दिल्ली ने लगातार शहरी निर्माण देखा है, जिसमें ऊंची-ऊंची रिहायशी इमारतें, कमर्शियल कॉम्प्लेक्स, फ्लाईओवर, मेट्रो रेल का विस्तार और बड़े पैमाने पर इंफ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट शामिल हैं। जबकि शहरी विकास एक बढ़ते महानगर के लिए जरूरी और अनिवार्य है, इसकी गति, पैमाना और पर्यावरण निगरानी की कमी ने रेगुलेटरी सुरक्षा उपायों को बहुत पीछे छोड़ दिया है। निर्माण की धूल पार्टिकुलेट मैटर (PM10 और PM2.5) में एक मुख्य योगदानकर्ता के रूप में उभरी है, जिससे पहले से ही खतरनाक हवा की गुणवत्ता का स्तर और खराब हो गया है।

निर्माण की धूल पार्टिकुलेट मैटर (PM10 और PM2.5) प्रदूषण में सबसे बड़े योगदानकताओं में से एक बनी हुई है। मौजूदा नियमों के बावजूद जो धूल नियंत्रण उपायों - जैसे कि हरी जाली, पानी का छिड़काव और सामग्री का ढका हुआ परिवहन - को अनिवार्य करते हैं, नियमों का पालन लगातार नहीं होता है और प्रवर्तन भी कभी-कभी होता है। गाजियाबाद, नोएडा, फरीदाबाद और गुरुग्राम - एनसीआर के प्रमुख शहर - दिल्ली के वायु प्रदूषण में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। इन शहरों में तेजी से औद्योगिक विस्तार, बिना योजना के ऊंची-ऊंची इमारतों का विकास और चौबीसों घंटे निर्माण गतिविधि ने धूल और उत्सर्जन को बढ़ा दिया है, जिससे क्षेत्रीय हवा की गुणवत्ता खराब हो गई है और राष्ट्रीय राजधानी के भीतर प्रदूषण नियंत्रण प्रयासों

प्राइवेट गाड़ियों की संख्या में जबरदस्त बढ़ोतरी

दिल्ली के विकास का सबसे साफ नतीजा प्राइवेट गाड़ियों की संख्या में बेहिसाब बढ़ोतरी है। लास्ट-माइल पब्लिक ट्रांसपोर्ट कनेक्टिविटी की कमी और पर्सनल मोबिलिटी की बढ़ती पसंद की वजह से कार खरीदने में तेजी आई है। हर साल, सड़कों पर हजारों नई गाड़ियां जुड़ रही हैं, जिन्हें इतनी ज्यादा गाड़ियों को संभालने के लिए कभी डिजाइन ही नहीं किया गया था।

ट्रैफिक जाम—खासकर दिल्ली को हरियाणा और उत्तर प्रदेश से जोड़ने वाले इंटर-स्टेट बॉर्डर पॉइंट्स पर—रोज की सच्चाई बन गया है। कारों, बसों, ट्रकों और कमर्शियल गाड़ियों की लंबी लाइनें टोल प्लाजा और चेकपॉइंट्स से धीरे-धीरे गुजरती हैं, और लगातार प्रदूषण फैलाती रहती हैं। गाड़ियों से निकलने वाला धुआँ नाइट्रोजन ऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड और बारीक कणों वाले प्रदूषण का एक बड़ा कारण बना हुआ है।

ऑड-ईवन स्कीम और गाड़ियों की उम्र पर पाबंदी जैसे पॉलिसी दखल के बावजूद, प्राइवेट गाड़ियों पर बहुत ज्यादा निर्भरता की मुख्य समस्या अभी भी हल नहीं हुई है।

को कमजोर किया है।

साथ ही, पड़ोसी राज्यों से माइग्रेशन के कारण तेजी से बढ़ती आबादी ने आवास, स्वच्छता, पानी की आपूर्ति, सड़कों और कचरा प्रबंधन प्रणालियों पर असाधारण दबाव डाला है, जिनमें से कई पहले से ही अपनी क्षमता से ज्यादा काम कर रहे हैं।

सरकारी हस्तक्षेपः GRAP-IV उपाय

17 दिसंबर, 2025 को दिल्ली सरकार के पर्यावरण और वन सचिव ने पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 की धारा 5 के तहत निर्देश जारी किए, जिसमें ग्रेडेड रिस्पांस एक्शन प्लान के स्टेज-4 (गंभीर+) को लागू किया गया।

सबसे सख्त उपायों में से एक था उन गैर-दिल्ली निजी वाहनों के प्रवेश पर प्रतिबंध लगाना जो BS-VI उत्सर्जन मानकों को पूरा नहीं करते हैं। इसके अलावा, दिल्ली सरकार ने 'नो PUC, नो फ्यूल' नीति लागू की, जिसके तहत फ्यूल स्टेशनों को बिना वैध पॉल्यूशन अंडर कंट्रोल सर्टिफिकेट वाले वाहनों को पेट्रोल या डीजल देने से रोक दिया गया।

इसका पालन सुनिश्चित करने के लिए, अधिकारियों ने उन्नत तकनीकी उपकरणों का इस्तेमाल किया, जिसमें ऑटोमैटिक नंबर प्लेट रिकग्निशन (ANPR) कैमरे, पेट्रोल पंपों पर वॉयस अलर्ट सिस्टम और बड़े पैमाने पर पुलिस की तैनाती शामिल थी। लगभग 580 पुलिस कर्मियों को 126 चेकपॉइंट पर तैनात किया गया था, जिसमें अंतर-राज्यीय सीमाएं भी शामिल थीं, जबकि परिवहन विभाग की प्रवर्तन टीमों को पेट्रोल पंपों और एंट्री पॉइंट पर तैनात किया गया था।

सड़कों पर CNG और इलेक्ट्रिक वाहन, लेकिन हवा में अभी भी जहर

CNG और इलेक्ट्रिक वाहनों को अपनाने में बढ़ोतरी के बावजूद, दिल्ली अभी भी खतरनाक प्रदूषण के स्तर से जूझ रही है। यह सच्चाई इस मिथक को उजागर करती है कि केवल स्वच्छ वाहन तकनीक ही अनियोजित शहरीकरण, निर्माण की धूल, भीड़भाड़, औद्योगिक उत्सर्जन और क्षेत्रीय प्रदूषण स्रोतों से पैदा हुए संकट को हल कर सकती है। भले ही दिल्ली की सड़कों पर CNG और इलेक्ट्रिक वाहनों की संख्या बढ़ रही है, लेकिन शहर की हवा जहरीली बनी हुई है - यह इस बात पर जोर देता है कि सिस्टम में सुधार के बिना, तकनीकी बदलाव केवल सीमित राहत देते हैं।

व्यावहारिक और रोजगार संबंधी चिंताएँ

प्रदूषण नियंत्रण उद्देश्यों का समर्थन करते हुए, पेट्रोल पंप ऑपरेटरों ने 'नो PUC, नो फ्यूल' निर्देश के व्यावहारिक कार्यान्वयन के संबंध में गंभीर चिंताएँ जताई हैं। दिल्ली पेट्रोल डीलर्स एसोसिएशन ने पर्यावरण मंत्री मनजिंदर सिंह सिरसा को एक औपचारिक ज्ञापन में प्रदूषण विरोधी उपायों के लिए ₹पूरा समर्थन₹ व्यक्त किया, लेकिन महत्वपूर्ण परिचालन चुनौतियों की ओर इशारा किया।

डीलरों ने ग्राहकों के साथ बार-बार टकराव, PUC सर्टिफिकेट के लिए रियल-टाइम सत्यापन तंत्र की कमी, ANPR सिस्टम में तकनीकी गड़बड़ियाँ और व्यस्त फ्यूल स्टेशनों पर कानून-व्यवस्था की स्थिति बिगड़ने के जोखिम की सूचना दी। एसोसिएशन ने स्पष्ट परिचालन दिशानिर्देश, अतिरिक्त कर्मचारियों और सरकारी निदेर्शों को लागू करने वाले डीलरों के लिए कानूनी सुरक्षा की मांग की है।

प्रवर्तन उपकरण के रूप में प्रौद्योगिकीः वादे और कमियाँ

प्रौद्योगिकी पर बढ़ती निर्भरता डेटा-संचालित प्रवर्तन की ओर बदलाव को दशार्ती है। हालांकि ANPR कैमरों जैसे टूल मॉनिटरिंग की क्षमता बढ़ाते हैं, लेकिन उनकी भी कुछ सीमाएँ हैं। टेक्निकल खराबियाँ, पुराना डेटाबेस, गलत रीडिंग, और विभागों के बीच खराब तालमेल से लागू करने की विश्वसनीयता कम हो सकती है।

टेक्नोलॉजी पर्याप्त स्टाफिंग, जनता में जागरूकता, पारदर्शी सिस्टम और प्रभावी शिकायत निवारण सिस्टम की जगह नहीं ले सकती। लागू करने का काम निष्पक्ष, सटीक और जवाबदेह होना चाहिए।

लंबे समय के स्ट्रक्चरल सुधारों की जरूरत

हालांकि GRAP के तहत इमरजेंसी उपाय जरूरी हैं, लेकिन वे लंबे समय के समाधानों की जगह नहीं ले सकते। दिल्ली के प्रदूषण संकट के लिए व्यापक स्ट्रक्चरल सुधारों की जरूरत है, जिसमें पब्लिक ट्रांसपोर्ट सिस्टम का विस्तार और इंटीग्रेशन, टोल प्लाजा और बॉर्डर चेकपॉइंट का रैशनलाइजेशन और कंस्ट्रक्शन गतिविधियों का सख्त रेगुलेशन और मॉनिटरिंग शामिल है।

जन स्वास्थ्य पर असर

दिल्ली के वायु प्रदूषण संकट का इंसानों पर बहुत ज्यादा असर होता है। गंभीर प्रदूषण के समय अस्पतालों में सांस की बीमारियों, अस्थमा के दौरे, दिल की बीमारियों और आंखों और त्वचा की समस्याओं के मामलों में बढ़ोतरी देखी जाती है। बच्चे और बुजुर्ग सबसे ज्यादा कमजोर होते हैं।

मेडिकल एक्सपर्ट चेतावनी देते हैं कि जहरीली हवा के लगातार संपर्क में रहने से जीवन प्रत्याशा कम हो जाती है और बच्चों में सोचने-समझने की क्षमता का विकास ठीक से नहीं हो पाता है। आर्थिक लागत - स्वास्थ्य देखभाल खर्च और उत्पादकता के नुकसान के रूप में - सालाना हजारों करोड़ रुपये तक पहुँच जाती है।

इसलिए, प्रदूषण नियंत्रण के उपाय सिर्फ.रेगुलेटरी कार्रवाई नहीं हैं, बल्कि ये जरूरी सार्वजनिक स्वास्थ्य जरूरतें हैं।

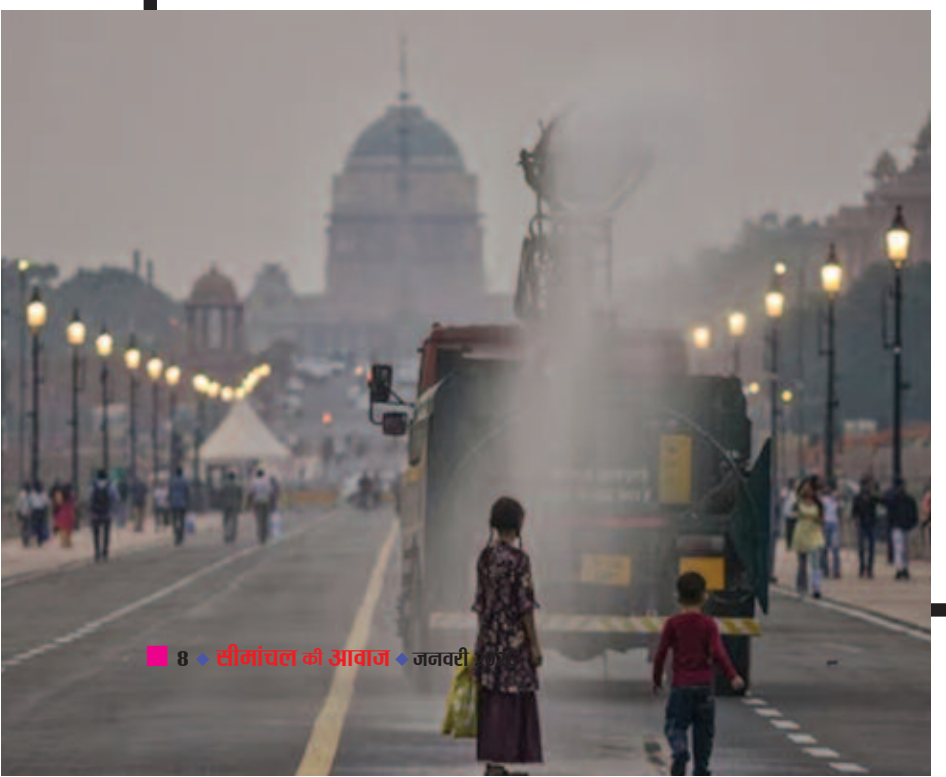

भारत-ओमान CEPA : पश्चिम एशिया में व्यापार के नए अवसर

● डेस्क

भारत ने ओमान के साथ एक व्यापक आर्थिक साझेदारी समझौते (CEPA) पर हस्ताक्षर किए हैं, जो संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोपीय संघ जैसे प्रमुख पश्चिमी बाजारों में बढ़ते व्यापार बाधाओं के बीच पश्चिम एशिया में निर्यात के अवसरों का विस्तार करने की नई दिल्ली की रणनीति में एक महत्वपूर्ण कदम है। इन बाधाओं में उच्च आयात शुल्क और कार्बन से संबंधित कर शामिल हैं, जिसने भारत को अपने व्यापार स्थलों में विविधता लाने और कुछ बड़े बाजारों पर निर्भरता कम करने के लिए प्रेरित किया है।

भारत-ओमान CEPA पर मस्कट में प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी और ओमान के राष्ट्राध्यक्ष, सुल्तान हैथम बिन तारिक की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए गए। यह समझौता पिछले छह महीनों में भारत का दूसरा मुक्त व्यापार समझौता (FTA) है, जो मई में यूनाइटेड किंगडम के साथ हुए ऐतिहासिक समझौते के बाद हुआ है। यह अमेरिका के साथ संभावित व्यापार समझौते को लेकर अनिश्चितता जारी रहने के कारण FTAS को तेज करने के भारत के व्यापक प्रयास को भी दशार्ता है।

इस समझौते का विशेष रणनीतिक महत्व है क्योंकि भारत और व्यापक खाड़ी सहयोग परिषद (GCC) के बीच बातचीत वर्षों से रुकी हुई थी। इस समझौते के साथ, ओमान 2022 में UAE के बाद दूसरा GCC सदस्य बन गया है जिसने भारत के साथ एक व्यापक व्यापार समझौता किया है। गौरतलब है कि यह ओमान का लगभग दो दशकों में पहला मुक्त व्यापार समझौता है, जो आर्थिक जुड़ाव को गहरा करने के आपसी रणनीतिक इरादे को रेखांकित करता है।

भारत के वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय के अनुसार, CEPA के तहत, भारतीय वस्तुओं को ओमान की 98.08% टैरिफ लाइनों पर शून्य-शुल्क बाजार पहुंच मिलेगी। इससे भारत के इंजीनियरिंग सामान, वस्त्र, चमड़े के उत्पाद, फार्मास्यूटिकल्स, कृषि उत्पाद और अन्य मूल्य वर्धित वस्तुओं के निर्यात में काफी वृद्धि होने की उम्मीद है। बदले में, भारत ने अपनी 77.79% टैरिफ लाइनों पर टैरिफ उदारीकरण की पेशकश की है, जिसमें ओमान से होने वाले लगभग 95% आयात शामिल हैं, जिनमें से अधिकांश ऊर्जा से संबंधित हैं।

भारत और ओमान के बीच द्विपक्षीय व्यापार वर्तमान में लगभग 10.5 बिलियन डॉलर है और इसमें मस्कट से कच्चे तेल, LNG और अन्य ऊर्जा आयात का वर्चस्व है। CEPA का लक्ष्य अधिक दो-तरफा निवेश को प्रोत्साहित करके, सेवाओं के व्यापार को बढ़ाकर, और लॉजिस्टिक्स, विनिर्माण और आपूर्ति श्रृंखलाओं में सहयोग को सुविधाजनक बनाकर इस व्यापार टोकरी में विविधता लाना है।

भारत-ओमान समझौता पिछले पांच वर्षों में भारत का छठा मुक्त व्यापार समझौता है, जो मॉरीशस, UAE, ऑस्ट्रेलिया, यूरोपीय मुक्त व्यापार संघ (EFTA) ब्लॉक और UK के साथ हुए समझौतों के बाद हुआ है। नई दिल्ली यूरोपीय संघ, न्यूजीलैंड और चिली के साथ भी एडवांस्ड ट्रेड बातचीत में लगी हुई है।

FTA भारत की आर्थिक रणनीति का एक मुख्य स्तंभ बन गए हैं, जो देश को ग्लोबल सप्लाई चेन में और गहराई से जुड़ने, एक्सपोर्ट बढ़ाने और लंबे समय तक रोजगार पैदा करने में मदद करते हैं। टैरिफ कम करके, ट्रेड प्रक्रियाओं को आसान बनाकर और अनुमानित नियम बनाकर, भारत-ओमान CEPA जैसे समझौतों से भारतीय बिजनेस की कॉम्पिटिटिवनेस बढ़ने और ग्लोबल ट्रेड की अनिश्चितताओं के बीच नए और मजबूत बाजारों के दरवाजे खुलने की उम्मीद है।

नितिन नबीन

युवा नेता को शीर्ष पद पर बैठाना यह प्रदर्शित कर रहा है कि भाजपा अब अगली पीढ़ी के नेतृत्व पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रही है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पहले ही यह कहता रहा है कि भाजपा को भविष्य के नेतृत्व पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

युवा नेतृत्व के प्रतीक

● कुमार कृष्णन

भारतीय जनता पार्टी ने बिहार के मंत्री नितिन नबीन को पार्टी का राष्ट्रीय कार्यकारी अध्यक्ष बनाकर बड़े-बड़े दिग्गजों को हैरान कर दिया है। नितिन नबीन वर्तमान पार्टी अध्यक्ष जे.पी. नड्डा की जगह पर बनाए गए। 45 वर्षीय नितिन नबीन भाजपा के सबसे युवा अध्यक्षों में से एक हैं। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और गृहमंत्री अमित शाह के मन में क्या चल रहा है। इसका अनुमान कोई तीसरा व्यक्ति नहीं लगा सकता। दोनों ने बड़े-बड़े फैसले कर पार्टी कार्यकताओं के साथ-साथ देशभर को हमेशा ही बड़ा संदेश दिया है।

आखिर ऐसा क्या है कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और गृहमंत्री अमित शाह ने नितिन को संगठन की राष्ट्रीय धुरी पर ला खड़ा किया। संदेश स्पष्ट है कि भाजपा में कार्यकर्ता का सम्मान होता है। मेहनत और ईमानदारी से पार्टी के प्रति समर्मित होकर काम करने वाले ही उच्च पदों पर विराजमान होते हैं। युवा नेता को शीर्ष पद पर बैठाना यह प्रदर्शित कर रहा है कि भाजपा अब अगली पीढ़ी के नेतृत्व पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रही है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पहले ही यह कहता रहा है कि भाजपा को भविष्य के नेतृत्व पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। इस तरह भाजपा 2029 और उसके बाद के भारत के दृश्य को देख रही है।

उनके बिहार सरकार में मंत्री रहते हुए राष्ट्रीय कार्यकारी अध्यक्ष नियुक्त किया है। भाजपा के राष्ट्रीय महासचिव अरुण सिंह द्वारा जारी आदेश में कहा गया है कि संसदीय बोर्ड ने यह फैसला लिया है और नियुक्ति तत्काल प्रभावी है। वे पार्टी में युवा नेतृत्व का प्रतीक माने जा रहे हैं। पार्टी की 'एक व्यक्ति एक पद' नीति के कारण बिहार सरकार में मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया । नितिन नबीन को राजनीति की विरासत अपने पिता से ही मिली है। उनके पिता नबीन

किशोर सिन्हा जनसंघ से ही भाजपा से जुड़े। वे सात बार विधायक रहे। उनके निधन के बाद नितिन ने विरासत संभाली। नितिन नबीन ने अपनी सियासी पारी की शुरूआत भाजपा के छात्र संगठन अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद से की थी। इसके बाद वे भाजपा युवा मोर्चा से जुड़े रहे। उन्होंने अपनी मेहनत और योग्यता से जगह बनाई। छत्तीसगढ़ के चुनावों में उन्हें प्रभारी बनाया गया था जहां उन्होंने कांग्रेस सरकार का तख्ता पलट दिया था। छत्तीसगढ़ में कांग्रेस का किला उखाड़ फैंकने के बाद बिहार के चुनावों में भी उन्होंने मेहनत के साथ काम करते हुए पार्टी को अभूतपूर्व विजय दिलाई। नितिन नबीन बिहार सरकार में पथ निर्माण मंत्री और पटना की बांकीपुर सीट से पांच बार के विधायक हैं।

उन्होंने नितिन गडकरी की शैली में काम करते हुए हजारों किलोमीटर सड़कें बनवाईं जो प्रधानमंत्री मोदी के आधारभूत केन्द्रित विकास से मेल खाता है। उन्होंने एक ऐसे मंत्री की तरह काम किया जो फाइलों के पीछे नहीं छुपते बल्कि धरातल पर काम दिखाना चाहते हैं। पथ निर्माण मंत्री के रूप में उन्हें काफी सराहना भी मिली। उन्हें सत्ता और संगठन दोनों का अनुभव प्राप्त है। राजनीति में इतने साल रहने के बावजूद नितिन नबीन की छवि बेदाग रही है। वे लो-प्रोफाइल रहकर काम करने में यकीन रखते हैं। न कोई भड़काऊ बयान, न कोई भ्रष्टाचार का आरोप। माना जाता है कि भाजपा को शीर्ष पद के लिए ऐसे ही चेहरे की तलाश थी। पार्टी संगठन को मजबूत करने और आगामी सियासी रणनीति को धार देने में उनकी भूमिका अहम मानी जा रही है।

नितिन नबीन की नियुक्ति को बिहार की राजनीति में भाजपा के संगठनात्मक विस्तार के तौर पर देखा जा रहा है। नितिन नबीन को कार्यकारी अध्यक्ष बनाकर भाजपा ने कायस्थ समुदाय को सियासी संदेश दिया है। नितिन नबीन कायस्थ समुदाय से आते हैं। जनसंघ से लेकर भाजपा तक के सफर में कायस्थ समुदाय पार्टी का कोर वोट बैंक बना रहा है। कायस्थ समाज को सबसे पढ़ा-लिखा तबका माना जाता है। भाजपा ने देश के बौद्धिक वर्ग और अपने परंपरागत वोटर का खास ख्याल रखते हुए नितिन नबीन को

संगठन का शीर्ष पद सौंपा है। जातिगत समीकरणों को साधने के साथ-साथ नितिन 'सबका साथ' वाली छवि भी रखते हैं। हिंदी पट्टी के शहरी इलाकों में कायस्थ समुदाय के वोटर निर्णायक भूमिका में हैं जिन पर नितिन नबीन की पकड़ मजबूत मानी जाती है। कायस्थ समुदाय की संख्या भले कम हो पर उनकी बौद्धिक उपस्थिति, प्रशासनिक पकड़ और शहरी नेतृत्व में भूमिका हमेशा से महत्वपूर्ण रही है। नितिन नबीन ने इस भूमिका को न सिर्फ निभाया है बल्कि और मजबूत किया है। नितिन नबीन का शांत स्वभाव, संतुलित बयानबाजी और बिना विवादों के काम करने की छवि उन्हें कायस्थ समाज का स्वाभाविक और स्वीकार्य नेता बनाती है।

भाजपा की परंपरागत शैली पर नजर डालें तो कार्यकारी अध्यक्ष औपचारिक चुनाव के बाद अध्यक्ष पद धारण कर लेता है। लिहाजा पार्टी ने परंपराओं का पालन बखूबी कर लिया । जिस कायस्थ समाज से नितिन आते हैं, उसकी आबादी 2023 में कराई गई जातीय गणना के मुताबिक बिहार में मात्र 0.6% है । इस हिसाब से बिहार में केवल 7.85 लाख कायस्थ हैं हालांकि जाति के संगठनों का दावा है कि केवल पटना में ही 10 लाख कायस्थ रहते हैं। आंकड़ों की हकीकत कुछ और भी हो सकती है पर इतना तय है कि विधानसभा चुनाव में मिली जबरदस्त जीत के साथ भाजपा ने राष्ट्रीय स्तर पर भी बिहार के संदेश की धमक दिखाने में देर नहीं की।

पश्चिम बंगाल में कायस्थ वोटर काफी अहम माने जाते हैं। ऐसे में नितिन नबीन के जरिए पश्चिम बंगाल को भी सियासी संदेश देने की कवायद की गई है ताकि कायस्थ वोटों का विश्वास जीतकर बंगाल की सत्ता में कमल खिलाया जा सके। बिहार में भाजपा के तीन कायस्थ विधायक 2020 में थे जिसमें से दो विधायकों का टिकट पार्टी ने काट दिया था लेकिन नितिन नबीन एकलौते थे जिन पर भरोसा जताया था। ऐसे में नितिन नबीन बंगाल चुनाव में भाजपा के लिए एक तरह से ट्रंप कार्ड साबित हो सकते हैं।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने उन्हें शुभ कामनाएं देते हुए जो विशेषण इस्तेमाल किए हैं, वह यह बताते हैं कि उन्हें जिम्मेदारी क्यों दी गई। युवा ऊर्जा, संगठनात्मक अनुभव, मेहनत और जनता से जुड़ाव के कारण। इन शब्दों को समझें तो साफ हो जाता है कि भाजपा भविष्य के लिए एक मजबूत, समर्पित और जमीन से जुड़े नेता को तैयार कर रही है। पीएम मोदी और अमित शाह के सोशल मीडिया पोस्ट में इस्तेमाल विशेषण नबीन की नियुक्ति का कारण स्पष्ट करते हैं। पीएम मोदी ने उन्हें कर्मठ कार्यकर्ता, युवा, परिश्रमी, विनम्र, समर्पित और ऊर्जावान बताया। अमित शाह ने युवा, दिन-रात परिश्रम करने वाले, निष्ठावान और सफल कहा, साथ ही जनता के बीच लंबे अनुभव पर जोर दिया। ये शब्द बताते हैं कि भाजपा को ऐसे नेता की जरूरत थी जो संगठन को नई ताकत दे, युवाओं को जोड़े और चुनावी सफलता सुनिश्चित करें।

माना जाता है कि नितिन नबीन ही भाजपा के नए राष्ट्रीय अध्यक्ष भी होंगे। कुछ ऐसा ही जे.पी. नड्डा के समय में भी हुआ था। नड्डा को भी पहले कार्यकारी अध्यक्ष बनाया गया था और बाद में उन्हें ही राष्ट्रीय अध्यक्ष बनाया गया था। उम्मीद है कि नबीन पार्टी कार्यकर्ताओं में नई ऊर्जा का संचार करेंगे और पार्टी की नीतियों को प्रभावशाली ढंग से जन-जन तक पहुंचाने और भाजपा का विस्तार करने में सफल रहेंगे। उनकी नियुक्ति पार्टी के हर युवा कार्यकर्ता का सम्मान है। इस नियुक्ति का एक और संकेत है कि पार्टी में अगली पीढ़ी का समय शुरू हो चुका है। हर स्तर पर युवा भागीदारी बढ़ती दिख रही है। लंबे समय से संघ और संगठन के बीच समन्वय की बातें चल रही थीं। बतौर अध्यक्ष जेपी नड्डा के कार्यकाल को विस्तार मिला था और संघ की तरफ से बार- बार निर्देश मिल रहे थे । इस बीच कई नाम चर्चा में उठे लेकिन, मोदी और शाह की जोड़ी ने सारे अनुमानों को ध्वस्त करते हुए सवर्ण समाज से ऐसे युवा नेता को चुना है जो अत्यधिक विनम्रतावश कभी शिखर नेतृत्व का अनादर और उपेक्षा नहीं कर पाएगा।

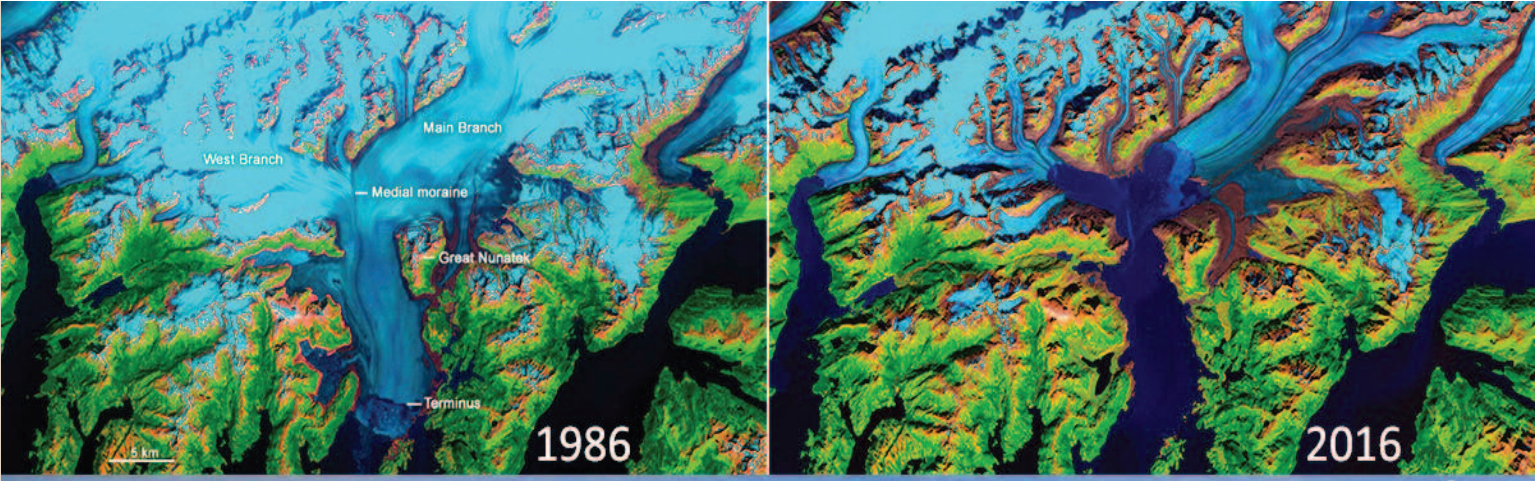

ग्लोबल वार्मिंग

का मनुष्य के साथ खेती और पशुओं पर पड़ रहा असर, भारत हाई रिस्क देशों की श्रेणी में शामिल

● पुनीत उपाध्याय

संभलने का वक्त आ गया है। यदि मनुष्य अभी भी नहीं बदला तो आने वाले भविष्य में उसे गंभीर प्राकृतिक चुनौतियां झेलनी पड़ेगी। इसकी शुरूआत हो चुकी है। खुद इंसान पर तो इसका असर पड़ने लगा है। खेती, पशु भी इससे बच नहीं पा रहे हैं। हाल ही में संयुक्त राष्ट्र द्वारा जारी रिपोर्ट में चेताया गया है कि ग्लोबल वार्मिंग के चलते बढ़ता तापमान न केवल फसलों के उत्पादन को घटा रहा है बल्कि मजदूरों की काम करने की क्षमता को भी कमजोर कर रहा है। इससे किसानों और मजदूरों की जीविका पर सीधा असर पड़ रहा है। कृषि मजदूरों में हीट स्ट्रेस, डिहाइड्रेशन और गर्मी से जुड़ी बीमारियां कहीं अधिक होती हैं। भारत पर इसका असर दिख रहा है. उसके पड़ौसी देश अफगानिस्तान, पाकिस्तान, नेपाल और बांग्लादेश भी गंभीर खतरे में हैं।

रिपोर्ट इस बात पर भी प्रकाश डालती है कि लगातार बढ़ते तापमान के कारण जहां फसलों का उत्पादन घट रहा है साथ ही पशुधन की उत्पादकता भी घट रही है। आशंका है कि भीषण गर्मी में मजदूरों के काम करने की क्षमता 27 फीसदी तक घट सकती है। इससे न केवल उनकी आमदनी में गिरावट आएगी साथ ही पूरा खाद्य तंत्र भी कमजोर पड़ सकता है।यह रिपोर्ट ष्एशिया.प्रशांत डिजास्टर रिपोर्ट 2025 के नाम से जारी की गई है जिसे गत दिनों संयुक्त राष्ट्र एशिया.प्रशांत क्षेत्र के आर्थिक और सामाजिक आयोग ने जारी किया था।

खेती भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़

भारतीय संदर्भ में देखा जाए तो इस रिपोर्ट में कही गई बात हमारे लिए चिंता पैदा करती है क्योंकि खेती भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। यह एशिया-प्रशांत क्षेत्र की जीडीपी में एक.चौथाई से अधिक का योगदान देती है। इतना ही नहीं इस क्षेत्र की ग्रामीण

आबादी का बड़ा हिस्सा अपनी जीविका के लिए कृषि पर ही निर्भर है। यही वजह है कि कृषि इस क्षेत्र में खाद्य सुरक्षा और जीविका के लिए बेहद मायने रखती है। रिपोर्ट ने चेताया है कि बढ़ती गर्मी फसलों और पशुधन को भारी तनाव में डाल रही है। भारत में मार्च 2022 में पड़ी भीषण गर्मी ने गेहूं की फसल को बुरी तरह झुलसा दिया था। गर्मी से कृषि पर पड़ने वाले खतरे को मापने के लिए यूएनईएससीएपी ने एग्रीकल्चर हीट स्ट्रेस स्कोर तैयार किया है। एग्रीकल्चर हीट स्ट्रेस स्कोर और लगातार गर्म दिनों की अवधि के आधार पर देशों को मध्यम, उच्च और अत्यधिक उच्च जोखिम श्रेणियों में रखा गया है। गर्मी के दबाव का यह अध्ययन तीन समय अवधियों में किया गया है।

क्लाइमेट रिस्क की जद में हैं देश के आधे से ज्यादा कृषि जिले

विशेषज्ञों का दावा है कि मौसम में हो रहे बदलावों से बच्चों और बुजुर्गों और गरीबों पर सबसे अधिक प्रभावए स्वास्थ्यए आजीविका और आर्थिकी पर असर पडेगा भारत एक कृषि प्रधान देश है और इस क्षेत्र का अर्थव्यवस्था में अहम योगदान है। देश की रीढ़ माने जाने वाला कृषि क्षेत्र जलवायु परिवर्तन का बड़ा दंश झेल रहा है। देशभर में 573 कृषि जिले क्लाइमेट रिस्क केटेगरी में आ गए हैं। इन 573 जिलों में से 90 फीसदी जिले ग्रामीण क्षेत्रों के अधीन हैं। उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र और राजस्थान उच्च संवेदनशील राज्यों में आ गए हैं। देश के 10 राज्यों एसे भी हैं जिनके 10 से अधिक जिले अतिसंवेदनशील श्रेणी में आ गए हैं जो इसके खतरों की गंभीरता को बयान कर रहा है। भारत में 2030 तक 5.8 फीसदी काम के घंटों का नुक्सान होगा और ग्लोबल वार्मिंग के कारण उत्पादकता में कमी होगी।

भारतीय गायों का चार फीसदी तक घट सकता है दूध

इधर अंतराष्ट्रीय जर्नल साइंस एडवांसेज में प्रकाशित लेख के अनुसार बढ़ती गर्मी और नमी से गायों में हीट स्ट्रेस बढ़ रहा है जिससे भारत जैसे देशों में दूध उत्पादन पर गंभीर असर पड़ सकता है। जलवायु में आते बदलावों का असर अब पिघलते ग्लेशियरों, समुद्र के बढ़ते जल स्तर और फसलों तक सीमित नहीं है। अब इसका सीधा असर गायों के दूध उत्पादन पर भी पड़ रहा है। एक नए अंतरराष्ट्रीय अध्ययन ने चेताया है कि भीषण गर्मी से महज एक दिन में ही गायों के दूध उत्पादन में 10 फीसदी तक की गिरावट आ सकती है। इतना ही नहीं, यह असर 10 से ज्यादा दिनों तक बना रह सकता है। इस गिरावट का सबसे बड़ा असर दुनियाभर के उन 15 करोड़ परिवारों पर पड़ेगा जो अपनी आजीविका के लिए दूध उत्पादन पर निर्भर हैं। शोध से पता चला है कि अगले 10 वर्षों में दुनिया में दूध उत्पादन में होने वाली आधी से ज्यादा बढ़ोतरी दक्षिण एशिया में होने की संभावना है जहां हीटवेव और गर्म व नमी भरी जलवायु और भी ज्यादा गंभीर रूप ले सकती है। भारत जैसे बड़े दुग्ध उत्पादक देश जहां पहले ही गर्म और उमस भरा मौसम आम है इस खतरे की सीधी चपेट में हैं। अंतराष्ट्रीय जर्नल साइंस एडवांसेज ने इजराइल की डेयरी व्यवस्था को आधार बनाकर यह आकलन किया है कि आने वाले वर्षों में जलवायु परिवर्तन दूध उत्पादन को कैसे प्रभावित कर सकता है।

बांग्लादेश को अस्थिर करने की साजिश?

क्षेत्रीय राजनीति में पाकिस्तान की बढ़ती चालें

इसके बदले पाकिस्तान ने भारत पर रणनीतिक दबाव बनाए रखने, हिंद-प्रशांत क्षेत्र में चीन के बढ़ते प्रभाव को संतुलित करने और अमेरिका के कुछ गुप्त अभियानों में सहयोग का आश्वासन देने की बात कही। रिपोर्ट के अनुसार, असीम मुनीर ने बांग्लादेश के मौजूदा सेना प्रमुख जनरल वकार उज जमां की जगह पाकिस्तान समर्थक अधिकारी की नियुक्ति के लिए भी समर्थन मांगा है।

● डेस्क

1971 में लंबे संघर्ष और हजारों लोगों की कुर्बानियों के बाद पाकिस्तान से अलग होकर अस्तित्व में आया बांग्लादेश एक बार फिर गंभीर राजनीतिक और सुरक्षा चुनौतियों के दौर से गुजरता दिख रहा है। बांग्लादेश को अस्थिर करने और उसे दोबारा ह्यपूर्वी पाकिस्तानह्ल जैसी स्थिति में धकेलने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर एक सुनियोजित साजिश चल रही है। यह आरोप बांग्लादेश के वरिष्ठ पत्रकार और ब्लिट्ज के संपादक सलाहुद्दीन शोएब चौधरी ने लगाए हैं, जिनसे दक्षिण एशिया की राजनीति में नई हलचल पैदा हो गई है। चौधरी के अनुसार, पाकिस्तान के आर्मी चीफ फील्ड मार्शल असीम मुनीर, अमेरिकी 'डीप स्टेट' और ढाका के कुछ कट्टरपंथी तत्व मिलकर बांग्लादेश को आतंकवाद और मादक पदार्थों की तस्करी का केंद्र बनाने की दिशा में काम कर रहे हैं। उनका दावा है कि यदि समय रहते इन गतिविधियों पर रोक नहीं लगी, तो इसका असर केवल बांग्लादेश तक सीमित नहीं रहेगा, बल्कि पूरे दक्षिण एशिया की स्थिरता पर गंभीर खतरा मंडराने लगेगा।

यूनुस सरकार के बाद बदले समीकरण

सलाहुद्दीन शोएब चौधरी ने अपने लेख में लिखा है कि अगस्त 2024 में मोहम्मद यूनुस के नेतृत्व में अंतरिम सरकार के गठन के बाद से पाकिस्तान की सेना और इंटर-सर्विसेज इंटेलिजेंस (क्रक) की गतिविधियां बांग्लादेश में तेजी से बढ़ी हैं। आरोप है कि पाकिस्तान मौजूदा राजनीतिक अस्थिरता और प्रशासनिक कमजोरी का लाभ उठाकर बांग्लादेश पर अप्रत्यक्ष प्रभाव स्थापित करना चाहता है और उसे क्षेत्रीय आतंकवादी अभियानों के लिए एक अग्रिम अड्डे में बदलने की कोशिश कर रहा है।

ट्रंप के सामने कथित ह्वडीलह्न

रिपोर्ट में यह भी दावा किया गया है कि असीम मुनीर ने एक उच्चस्तरीय बैठक के दौरान अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के सामने बांग्लादेश से जुड़ा एक रणनीतिक प्रस्ताव रखा। कथित तौर पर बलूचिस्तान और खैबर पख्तूनख्वा में तेल व गैस की खोज में सहयोग के बदले वॉशिंगटन से यह अपेक्षा जताई गई कि अमेरिका दक्षिण एशिया में पाकिस्तान के प्रभाव वाला एक ह्ववफादार साझेदारह्न बांग्लादेश सुनिश्चित करे।

इसके बदले पाकिस्तान ने भारत पर रणनीतिक दबाव बनाए रखने, हिंद-प्रशांत क्षेत्र में चीन के बढ़ते प्रभाव को संतुलित करने और अमेरिका के कुछ गुप्त अभियानों में सहयोग का आश्वासन देने की बात कही। रिपोर्ट के अनुसार, असीम मुनीर ने बांग्लादेश के मौजूदा सेना प्रमुख जनरल वकार उज जमां की जगह पाकिस्तान समर्थक अधिकारी की नियुक्ति के लिए भी समर्थन मांगा है।

भारत-बांग्लादेश संबंधों में बढ़ता तनाव

बीते लगभग एक वर्ष से भारत और बांग्लादेश के रिश्ते पहले जैसे नहीं रहे हैं। हर बीतते दिन के साथ दोनों देशों के संबंधों में तनाव बढ़ता दिख रहा है। इसकी एक अहम वजह बांग्लादेश में हिंदू अल्पसंख्यकों पर लगातार हो रहे हमले और हिंसा के मामले हैं। भारत ने इन घटनाओं को लेकर बांग्लादेश की मौजूदा सरकार से कड़ी आपत्ति जताई है और वहां रह रहे अल्पसंख्यकों, विशेषकर हिंदुओं की सुरक्षा सुनिश्चित करने की मांग की है। इसके बावजूद, हिंसा की घटनाएं थमती नजर नहीं आ रही हैं।

पाकिस्तान की ओर झुकाव और क्रक की ढाका में मौजूदगी

इसी बीच संकेत मिल रहे हैं कि बांग्लादेश पाकिस्तान के साथ अपने रिश्ते मजबूत करने की दिशा में आगे बढ़ रहा है। विशेषज्ञों का मानना है कि ढाका का इस्लामाबाद के प्रति बढ़ता झुकाव भारत के साथ उसके संबंधों को और जटिल बना सकता है। इसी कड़ी में पाकिस्तान की खुफिया एजेंसी क्रक की ढाका में बढ़ती मौजूदगी को अहम माना जा रहा है।

मीडिया रिपोर्ट्स के मुताबिक, क्रककी एक उच्चस्तरीय टीम 21 जनवरी 2025 को ढाका पहुंची थी, जिसमें मेजर जनरल शाहिद आमीर और दो ब्रिगेडियर शामिल बताए गए। यह टीम 24 जनवरी तक ढाका में रही और इस दौरान बांग्लादेशी सेना के वरिष्ठ अधिकारियों से मुलाकात की। गौरतलब है कि शाहिद आमीर चीन में पाकिस्तान के मिलिट्री डिप्लोमेट रह चुके हैं, जिससे इस पूरे घटनाक्रम में चीन एंगल को लेकर भी अटकलें तेज हो गई हैं।

शेख हसीना की चेतावनी

पूर्व प्रधानमंत्री शेख हसीना ने बांग्लादेश में बढ़ते इस्लामिस्ट प्रभाव और सुरक्षा चिंताओं पर तीखी प्रतिक्रिया दी है। उन्होंने कहा कि यूनुस सरकार ने कट्टरपंथियों को कैबिनेट में जगह दी, दोषी आतंकवादियों को जेल से रिहा किया और अंतरराष्ट्रीय आतंकी संगठनों से जुड़े समूहों को सार्वजनिक जीवन में सक्रिय होने की अनुमति दी। शेख हसीना के अनुसार, यह न केवल बांग्लादेश बल्कि पूरे दक्षिण एशिया की स्थिरता के लिए खतरनाक संकेत है।

क्षेत्रीय सुरक्षा और भारत के लिए निहितार्थ

विश्लेषकों का मानना है कि यदि इन घटनाक्रमों पर समय रहते ध्यान नहीं दिया गया, तो बांग्लादेश एक बार फिर क्षेत्रीय शक्तियों के बीच भू-राजनीतिक शतरंज का मोहरा बन सकता है। इसका सीधा असर भारत की सुरक्षा, पूर्वोत्तर राज्यों की स्थिरता और पूरे दक्षिण एशिया की शांति पर पड़ सकता है।

भारत के लिए यह स्थिति रणनीतिक और कूटनीतिक दोनों स्तरों पर सतर्कता की मांग करती है। विशेषज्ञों के अनुसार, नई दिल्ली को बांग्लादेश में सभी राजनीतिक ताकतों से संवाद बनाए रखते हुए समावेशी लोकतांत्रिक प्रक्रिया को प्रोत्साहित करना होगा, खासकर फरवरी 2026 में प्रस्तावित चुनावों के मद्देनजर। कमजोर सार्क और मजबूत क्षेत्रीय मंचों की अनुपस्थिति में, भारत के लिए दक्षिण एशिया में संतुलन बनाए रखना एक बड़ी चुनौती बनता जा रहा है।

बाबरी मस्जिद

बंगाल में भाजपा का खेल बिगाड़ सकती है

● राजेश कुमार पासी

टीएमसी के विधायक हुमायूं कबीर बंगाल के मुर्शिदाबाद में बाबरी मस्जिद का निर्माण करवाने जा रहे हैं। ममता बनर्जी ने उनके इस कारनामे के कारण उन्हें पार्टी से निलंबित कर दिया है। इसके बाद हुमायूं कबीर ने ममता बनर्जी को मुस्लिम विरोधी करार दिया है। बाबरी मस्जिद के नाम पर हुमायूं खुद को मुस्लिम समाज का हीरो बनाने की कोशिश कर रहे हैं । 6 दिसम्बर को बाबरी मस्जिद की नींव रख दी गई है और हर जुमे पर नमाज पढ़ने के लिए वहां लाखों की भीड़ इकट्ठा हो रही है। लोग अपने सिर पर मस्जिद निर्माण के लिए ईंटें उठाकर निर्माण स्थल पर आ रहे हैं। इसमें सिर्फ बंगाल के मुस्लिम शामिल नहीं हैं बल्कि दूसरे राज्यों से भी लोगों की भीड़ आ रही है। मुस्लिम समुदाय भावनात्मक रूप से इस मस्जिद से जुड़ता जा रहा है। जिस देश में 25 करोड़ मुस्लिम रहते हों, वहां मस्जिद का बनना एक सामान्य घटना है लेकिन बाबर के नाम पर एक मस्जिद का निर्माण एक असामान्य घटना है । इस मस्जिद की आड़ में हुमायूं कबीर अपना राजनीतिक कद बढ़ा रहे हैं। अचानक ही वो मुस्लिम समाज के बड़े नेता बन गए हैं। इससे उत्साहित होकर उन्होंने अपनी राजनीतिक पार्टी बनाने का ऐलान कर दिया है। उन्होंने कहा है कि उनकी पार्टी का मुकाबला भाजपा के साथ-साथ ममता बनर्जी की पार्टी टीएमसी से भी होगा।

देखा जाए तो एसआईआर से होने वाले संभावित नुकसान से परेशान ममता बनर्जी के लिए एक नई समस्या खड़ी हो गई है। मेरा मानना है कि मामला इतना सीधा नहीं है, जितना दिखाई दे रहा है। ममता बनर्जी की राजनीति का मुख्य आधार उनका मुस्लिम वोट बैंक है. उसे इतनी आसानी से ममता बनर्जी हाथ से जाने नहीं दे सकती । सरसरी तौर पर देखा जाए तो बेशक हुमायूं कबीर मुस्लिमों के बड़े नेता दिखाई दे रहे हों लेकिन सवाल यह है कि क्या वो मुस्लिम समाज के लिए ममता बनर्जी का विकल्प बन सकते हैं। क्या सच में हुमायूं ममता बनर्जी का विकल्प बनने की कोशिश कर रहे हैं या वो ममता बनर्जी की राजनीति के मोहरे है । सवाल यह है कि हुमायूं टीएमसी के कितने वोट अपनी संभावित पार्टी के खाते में डाल सकते हैं। मेरा मानना है कि सिर्फ एक भावनात्मक मुद्दे के सहारे ममता बनर्जी जैसी नेता को पटकनी देना संभव नहीं है। पिछले 15 साल से ममता बनर्जी के साथ मजबूती से जुड़े हुए मुस्लिम बाबरी मस्जिद के नाम पर उनको छोड़कर एक नए नेता के पीछे खड़े नहीं हो सकते।

वर्तमान राजनीति में ममता बनर्जी एक ऐसी नेता हैं जो भाजपा के लिए एक पहेली बनी हुई हैं। राहुल गांधी, अखिलेश यादव, तेजस्वी यादव और विपक्ष के अन्य नेताओं में ममता बनर्जी की राजनीतिक सूझबूझ सबसे ज्यादा है। भाजपा पूरा जोर लगाकर भी उनके खिलाफ कोई बड़ी सफलता अर्जित नहीं कर पाई है। भाजपा को जो सफलता बंगाल में हासिल हुई है, वो कांग्रेस और सीपीएम के कमजोर होने से हासिल हुई है। देखा जाए तो भाजपा ने कांग्रेस और सीपीएम को विपक्ष से हटाकर खुद को स्थापित किया है। 2026 के चुनाव में अब उसका मुकाबला सत्ता के लिए ममता बनर्जी से होने वाला है। ममता बनर्जी ने एसआईआर से होने वाले नुकसान का अंदाजा लगा लिया होगा । उनकी पूरी कोशिश होगी कि इस नुकसान की भरपाई की जाए । 15 साल से सत्ता में बैठी ममता इतनी आसानी से सत्ता हाथ से जाने नहीं देंगी, इसलिए उन्होंने अपनी चाल चलना शुरू कर दिया है। हुमायूं कबीर ममता बनर्जी के खिलाफ मैदान में उतर आए हैं और वो ओवैसी के साथ गठबंधन करके चुनावी मैदान में उतरने की तैयारी कर रहे हैं। सवाल यह है कि ममता बनर्जी उन्हें इतना बड़ा क्यों बनने दे रही हैं, जो उनको ही चुनौती देने लगा है। सारा पेंच यही है कि ममता बनर्जी ने हुमायूं कबीर को इतनी छूट क्यों दी कि उसने सिर्फ बंगाल ही नहीं बल्कि आसपास के राज्यों के मुस्लिमों को भी बाबरी मस्जिद के पक्ष में खड़ा कर लिया।

मेरा मानना है कि ममता बनर्जी की सहमति से ही सब कुछ हो रहा है। ममता बनर्जी एक ऐसी नेता हैं जिन्हें सत्ता के लिए देशहित से समझौता करने में भी गुरेज नहीं है। उनकी सरकार ने मुस्लिम वोट बैंक खड़ा करने के लिए बांग्लादेशी घुसपैठियों और रोहिंगायो की मदद की है, यह बात एसआईआर से

साबित हो रही है। उन्होंने मुस्लिम वोट बैंक पर कब्जा करने के लिए सीपीएम और कांग्रेस को कमजोर किया है। भाजपा समर्थक मीडिया में यह विमर्श चल रहा है कि हुमायूं कबीर टीएमसी के मुस्लिम वोट बैंक में सेंध लगा सकता है जिससे सीधा फायदा भाजपा को मिलेगा । बिहार में ओवैसी अपना कमाल दिखा चुके हैं, इसलिए उम्मीद की जा रही है कि हुमायूं कबीर की मदद से वो ये कमाल बंगाल में भी दिखा सकते हैं। यही कारण है कि सोशल मीडिया में भाजपा समर्थक एसआईआर और मुस्लिम वोट बैंक के बंटवारे के कारण ममता बनर्जी की हार निश्चित मान कर चल रहे हैं।

ममता बनर्जी की राजनीतिक चाल को समझने के लिए हमें हुमायूं कबीर के बयानों को समझना होगा । अगर हम हुमायूं के बयानों का ध्यानपूर्वक विश्लेषण करें तो पता चलता है कि वो ममता बनर्जी को मुस्लिम विरोधी सिद्ध करने में लगा हुआ है। इसके अलावा वो ममता बनर्जी को हिंदुओं की समर्थक बता रहा है क्योंकि उसे ममता ने बाबरी मस्जिद की नींव रखने के कारण निलंबित कर दिया है। ममता बनर्जी की 15 साल की राजनीति को जानने वाला उन्हें हिन्दू विरोधी मान सकता है, लेकिन मुस्लिम विरोधी नहीं मान सकता । सवाल यही है, क्या कारण है कि मुस्लिम तुष्टिकरण नीति की पराकाष्ठा करने वाली ममता बनर्जी को उनका ही एक विधायक मुस्लिम विरोधी सिद्ध करने में लगा हुआ है। उनकी छवि के विपरीत उन्हें हिंदुओं का नेता बता रहा है। उन्हें बाबरी मस्जिद का विरोधी सिद्ध करने की कोशिश की जा रही है, सच तो यह है कि अगर ममता बनर्जी बाबरी मस्जिद की विरोधी होती तो वो मस्जिद की एक ईंट भी नहीं रख सकता था। निर्माण स्थल पर करोड़ो ईंट जमा कर ली गई हैं और करोड़ों का चंदा इकट्ठा हो गया है। यह तब हो रहा है, जब ममता बनर्जी को मस्जिद का विरोधी बताया जा रहा है। क्या कोई मुस्लिम नेता यूपी में बाबरी मस्जिद के निर्माण की ऐसी कोशिश कर सकता है।

ऐसा लगता है कि बाबरी मस्जिद का निर्माण एक राजनीतिक साजिश है जिससे बंगाल के हिन्दू समुदाय को बहकाया जा रहा है। बाबरी मस्जिद के निर्माण के विरोध में ममता बनर्जी के खड़े होने से हिन्दू समुदाय में एक सकारात्मक संदेश गया है। हिन्दू समाज बहुत जल्दी बहकावे में आ जाता है. इसी कमजोरी का फायदा उठाने की कोशिश की जा रही है। जहां तक मुस्लिम समाज की बात है, उसकी राजनीतिक समझ बिल्कुल स्पष्ट है. उसे बहकाना संभव नहीं है। 2021 के चुनाव में मुस्लिमों के धार्मिक स्थल फुरफुरा शरीफ की पार्टी इंडियन सेक्युलर फ्रंट ममता बनर्जी के खिलाफ खड़ी थी लेकिन मुस्लिम समाज ने उसका साथ नहीं दिया । मुस्लिम समाज अच्छी तरह जानता है कि उसकी असली नेता ममता बनर्जी हैं. उनको छोड़ने का मतलब, भाजपा को मजबूत करना होगा। बंगाल में मुस्लिम समाज पूरी तरह से ममता बनर्जी के पीछे खड़ा है, उसके पास ममता बनर्जी के अलावा कोई विकल्प नहीं है। यही कारण है कि वो अब कांग्रेस और सीपीएम को वोट नहीं देता क्योंकि उसे लगता है कि इससे वोटों की बबार्दी होती है।

ऐसा लगता है कि हुमायूं कबीर की कोशिश मुस्लिम वोट बैंक में सेंध लगाने की नहीं है क्योंकि बंगाल में यह सम्भव नहीं है। उसकी कोशिश हिन्दू वोट बैंक में सेंधमारी करने की है। एसआईआर के कारण ममता बनर्जी को मुस्लिम वोट बैंक में कमी आने का अंदेशा हो गया है. वो इसकी कमी हिंदुओं के वोटों से पूरी करना चाहती हैं। बाबरी मस्जिद मामले से वो खुद को हिंदुओं के पक्ष में खड़ा करने की कोशिश कर रही हैं। वो हिन्दू समाज को बताना चाहती हैं कि वो हिन्दू विरोधी नहीं हैं। मुस्लिम वोट बैंक की प्रतिक्रिया में हिंदुओं के ध्रुवीकरण को रोकने की कोशिश की जा रही है। ममता बनर्जी जानती हैं कि मुस्लिम समाज के पास उनके अलावा कोई विकल्प नहीं है क्योंकि बंगाल में वो ही एकमात्र नेता हैं जो भाजपा को सत्ता में आने से रोक सकती हैं। मुस्लिम समाज भाजपा को सत्ता में आने से रोकने के लिए किसी भी हद तक जा सकता है। हिंदुओ को यह गलतफहमी हो सकती है कि ममता बनर्जी मुस्लिम विरोधी हैं लेकिन मुस्लिमों को ऐसी गलतफहमी होना संभव नहीं है। ममता बनर्जी अभी से चुनाव की तैयारी में जुट गई हैं और हुमायूं कबीर उनका ही फेंका हुआ एक पत्ता है, जिसे भाजपा लपकने की कोशिश कर सकती है। ममता बनर्जी एक ऐसी खिलाड़ी हैं, जो आखिरी बॉल फेंके जाने तक मुकाबला करेंगी । भाजपा के लिए जरूरी है कि वो उनके हर कदम पर नजर रखें। बंगाल जीतना भाजपा के लिए आसान होने वाला नहीं है। ममता बनर्जी सीधी चाल चलने के अलावा टेढ़ा चलना भी जानती हैं. उनसे मुकाबला दिलचस्प होने वाला है। 2026 का बंगाल विधानसभा चुनाव पूरे देश की राजनीति बदलने वाला साबित हो सकता है।

सोने की चिड़िया की संसद किस दिशा में..?

● अजय जैन 'विकल्प'

देश के लिए सब कुछ तय करने वाला सर्वोच्च सदन यानी संसद, जिसे देश की सबसे पवित्र और सबसे जिम्मेदार लोकतांत्रिक संस्था माना जाता है, उसी में 'वन्दे मातरम्' के लिए बहस के नाम पर अगर 10 घंटे तमाशे का अखाड़ा हो तो सोचना लाजमी है कि 'सोने की चिड़िया' रहा देश किस दिशा में जा रहा है। जब देश की जनता करोड़ों उम्मीदों के साथ अपने प्रतिनिधियों को इस पवित्र सदन में भेजती है और वे प्रतिनिधि मुद्दों को सुलझाने की बजाय समय के बहस के कुएँ में घंटों कीमती मिनट डुबो देते हैं तो बड़ा दुःख होता है कि इससे बड़ी विडंबना और क्या होगी ?

सबको पता है कि संसद का 1-1 मिनट जनता के कर के पैसे से चलता है, और जब सांसद 2-4 मिनट नहीं बल्कि पूरे 10 घंटे किसी एक गीत, किसी एक नारे, किसी एक विवाद पर ऐसी बहस में झोंक देते हैं जिसका देश की भलाई से सीधा कोई लेना-देना नहीं है तो यह लोकतंत्र के साथ विश्वासघात ही कहलाएगा ना।

आखिर 10 घंटे 'वन्दे मातरम्' गीत पर बहस क्यों ?

क्या यह सवाल करना अपराध है कि इतने लंबे समय तक आखिर बहस में क्या निष्कर्ष निकला ? क्या इस बहस से किसानों का कर्ज माफ हुआ ? क्या बेरोजगारों को नौकरी मिल गई ? क्या महंगाई रुक गई ? क्या गरीब को सस्ती दवा मिल गई ? और क्या युवाओं के लिए शिक्षा आसान हुई ? नहीं, तो फिर यह बहस किसलिए की गई ? बस इसलिए कि सत्ता पक्ष को अपनी नाक बड़ी करनी थी, विपक्ष की धुलाई करनी थी या विपक्ष ऐसा ही चाहता था कि समय बर्बाद होता रहे और इसका ठीकरा सरकार के माथे आए। यह भी कह सकते हैं कि सिर्फ राजनीतिक ध्रुवीकरण, सिर्फ टी.वी. के पर्दे पर सुर्खियाँ बटोरने के लिए और सिर्फ खुद को 'देशभक्त' साबित करने की होड़ के लिए ऐसा किया गया।

अब सवाल यह है कि ऐसे संसद का समय नष्ट करना क्या राष्ट्र के धन की खुली लूट नहीं है या फिर आम जनता शायद यह नहीं जानती कि संसद का 1 मिनट करीब ढाई लाख का पड़ता है। जरा सोचिए, करदाता के मन पर क्या बीतती है जब 10 घंटे ऐसी बहस में बर्बाद हों जिसका जनता को कोई लाभ नहीं है, देश को कुछ फायदा नहीं है, तो भी सीधे-सीधे करोड़ों हवा में उड़ा दिए गए हैं। ये पैसे किसी सांसद की निजी जेब से नहीं जाते. ये देश के मजदूर, किसान, कर्मचारी, छोटे व्यापारी, कर देने वाले युवाओं की जेब से जाते हैं। क्या यह आर्थिक अपराध नहीं है ? क्या नेताओं को इसका दंड नहीं मिलना चाहिए ?

इसके लिए पक्ष और विपक्ष दोनों बराबर जिम्मेदार हैं क्योंकि सत्ता पक्ष अपनी जिद में बहस को लंबा खींचता है, तो विपक्ष अपनी राजनीतिक बाजीगरी और जनता को लुभाने की कोशिश में इसे और भड़काता है। दोनों पक्षों का एक ही लक्ष्य रह जाता है- कैमरे पर दिखना, अपनी विचारधारा को जबरदस्ती ठूंसना और देश के मुद्दों को किनारे लगा देना पर यह भूल जाते हैं कि संसद टी.वी. स्टूडियो नहीं है। यह वह महत्वपूर्ण जगह है, जहाँ देश की दिशा तय होती है न कि नारेबाजी और लड़ाई की प्रतियोगिता। इन दोनों पक्ष को यह नहीं दिखता कि इसकी अपेक्षा बेरोजगारी पर 1 घंटे की सार्थक बहस करें। आज देश में करोड़ों युवा बेरोजगारी से जूझ रहे हैं। किसानों की आय बढ़ाने के वादे कागजों से

बाहर नहीं निकले हैं और आम आदमी के लिए तो महंगाई कम होने का नाम ही नहीं ले रही है तो सरकारी शालाओं व अस्पतालों की हालत बदतर है। इसके अलावा पानी, बिजली, शिक्षा, सुरक्षा सहित हर क्षेत्र में चुनौतियाँ हैं। तो क्या कभी सारे सांसद एकसाथ सहमत होकर इन वास्तविक मुद्दों पर 10 घंटे बहस करते हैं ? क्या कभी 1 ही दिन में ऐसी समस्याओं का सही समाधान निकालने की कोशिश हुई है ? जवाब है नहीं, क्योंकि ये मुद्दे न कैमरे में प्रचारित करते हैं, ना ही इससे समाचार चैनलों की प्रसिद्धि बढ़ती है। उल्टा इससे राजनीतिक दुश्मनी बढ़ती है, इसलिए इन पर बहस से बचा जाता है जबकि सरकार को जनता के लिए मूलतः यही सब करना है। आखिर जनता ने सरकार को क्यों चुना है-10 घंटे समय और करोड़ों की फिजूलखर्ची के लिए या अपने भले के लिए...।

निश्चित ही ऐसा होना लोकतंत्र की गिरती संस्कृति का प्रमाण है क्योंकि संसद की गरिमा इस देश की रीढ़ है। अगर वही मजाक बनती जाए तो समझ लीजिए बीमारी गहरी है। आज जब पूरा विश्व आर्थिक प्रतिस्पर्धा में आगे बढ़ रहा है और भारत को भी बढ़ना है, तो संसद में समय एवं रुपयों की यह फिजूलखर्ची हमें कहाँ ले जाएगी। ऐसा पहली बार नहीं हुआ है पर सरकार और विपक्ष ने आज तक इस विषय पर अपनी एकता नहीं दिखाई है।

संसद के माध्यम से जिन मुद्दों पर रात-दिन काम करना चाहिए, जिन कानूनों पर विस्तार से चर्चा होनी चाहिए, उन्हें जल्दबाजी में स्वीकृत कर दिया जाता है अथवा हाशिए पर रखा जाता है। वहीं जिन विषयों से देश का विकास नहीं होता, उन पर पूरा दिन बर्बाद कर दिया जाता है।

अब समय आ गया है कि संसद में समय बर्बाद करने को अपराध माना जाए। जनता हर जरिए से इसके लिए आवाज उठाए, आपत्ति ले और स्पष्ट कहे कि अगर कोई सांसद संसद में लगातार उदंडता करता है, बहस को भटकाता है, मुद्दों से ध्यान हटाता है, एवं नियम के विरुद्ध कुछ भी करता है तो उस पर अनिवार्यतः जुमार्ना लगाया जाना चाहिए। इसमें पक्षपात रहित कार्रवाई आवश्यक है, तभी राजनीति में सुधार सम्भव होगा। अगर किसी दिन की कार्यवाही बाधित होती है तो उसकी आर्थिक लागत जिम्मेदार सांसदों या दलों पर डालनी चाहिए क्योंकि आप जनसेवक और जनप्रतिनिधि हो, 'वन्दे मातरम्' पर बहस करने गए वक्ता नहीं। जनता को जागना होगा, बात करनी होगी।

अगर जनता इस बात पर सवाल नहीं उठाएगी कि उनका पैसा कहाँ और कैसे बर्बाद हो रहा है तो फिर ये तमाशे चलते रहेंगे। नेताओं को पता है कि मीडिया की तरह जनता आवाज नहीं उठाती है, तभी तो वे बेपरवाह हैं। इसलिए जनता को स्पष्ट संदेश देना होगा-संसद बहस के लिए है, बहस का मतलब मुद्दों पर समाधान निकालना है, ना कि नारेबाजी और राजनीतिक दिखावा करना है।

आखिर देश तो तभी बदलेगा ना, जब संसद बदलेगी और संसद तभी बदलेगी जब उसके सभी सदस्य अपनी जिम्मेदारी समझेंगे और वे तभी समझेंगे, जब जनता उन पर कठोर सवाल दागेगी क्योंकि 10 घंटे की बेमानी बहस लोकतंत्र का सीधा अपमान है। ऐसी हर फिजूल बहस को रोकना ही होगा। बहस बुरी नहीं, होनी चाहिए लेकिन विषय की गंभीरता और समय समझना पड़ेगा।

यह न सिर्फ समय की बबार्दी है बल्कि आर्थिक लूट है। सांसदों को ये समझना होगा कि संसद जनता के लिए बनाया गया 'निर्णय घर' है और जनता के पैसे की यह बबार्दी जनता अब बर्दाश्त नहीं करेगी। साफ है कि सदन में बहस हो, सांस्कृतिक सम्मान-अपमान की बात की जाए, पर आखिर जनता उस करोड़ों की राशि का बोझ क्यों झेले, जो कुछ नेताओं की राजनीतिक नौटंकी में बर्बाद होती है।

आज देश को जवाब चाहिए, नाटक नहीं क्योंकि हमारा देश तब आगे बढ़ेगा, जब संसद मुद्दों पर गंभीरता से काम करेगी। अगर संसद में भी जनप्रतिनिधि ऐसे गीत, नारों या राजनीतिक जिद में उलझकर जनता के विश्वास को चकनाचूर करेंगे तो फिर देशभक्ति, विकास और जनता के हित के काम कौन करेगा ? नेता प्रतिपक्ष, गृह मंत्री या प्रधानमंत्री से देशभक्ति का दिखावा अपेक्षित नहीं है बल्कि ईमानदार कार्रवाई और संसद के कीमती समय को खराब होने से बचाना है क्योंकि आप जिम्मेदारी की कुर्सी पर हैं।

सांसदों को ये समझना होगा कि संसद जनता के लिए बनाया गया 'निर्णय घर' है और जनता के पैसे की यह बबार्दी जनता अब बर्दाश्त नहीं करेगी। साफ है कि सदन में बहस हो, सांस्कृतिक सम्मान-अपमान की बात की जाए..

भजनलाल सरकार

अपनी अलग पहचान बनाए

> सरकार को विजनरी लीडरशिप की पहचान देनी वाली फ्लैगशिप योजनाएं, मिशन लॉन्च करने ही होंगे। लोकतंत्र का आज का राजनीतिक दौर परसेप्शन का ही है। जो परसेप्शन की लड़ाई में पिछड़ गया, वास्तविक लड़ाई में उसकी राह बेहद कठिन हो जाती है। उम्मीद की जानी चाहिए कि शुभचिंतकों के स्वर सीएम भजनलाल तक पहुंचेंगे।

● धीतेन्द्र कुमार शर्मा

मानना पड़ेगा कि भजनलाल सरकार इन दो साल में ऐसा कोई काम नहीं कर सकी जिससे उसकी छवि केन्द्र की छाया से निकल कर व्यक्तिगत पहचान वाली बन सके। मुख्यमंत्री भजनलाल को इसकी चिंता अवश्य करनी चाहिए। सरकार को विजनरी लीडरशिप की पहचान देनी वाली फ्लैगशिप योजनाएं, मिशन लॉन्च करने ही होंगे। लोकतंत्र का आज का राजनीतिक दौर परसेप्शन का ही है। जो परसेप्शन की लड़ाई में पिछड़ गया, वास्तविक लड़ाई में उसकी राह बेहद कठिन हो जाती है। उम्मीद की जानी चाहिए कि शुभचिंतकों के स्वर सीएम भजनलाल तक पहुंचेंगे।

रसोई गैस में 867 करोड़ की सब्सिडी, 1.53 लाख पदों पर नई भर्तियां, अनुप्रति कोचिंग योजना में 31127 विद्यार्थी लाभान्वित, खाद्य सुरक्षा योजना में 70 लाख नए नाम जोड़े, बिजली बिलों में साढ़े44 हजार करोड़ का अनुदान, घुमन्तु परिवारों को 22323 पट्टे वितरित, छात्राओं को 39664 स्कूटी वितरित वगैरह- वगैरह....! मीडिया में राजस्थान सरकार के विज्ञापनों में ऐसी ही उपलब्धियां भरी पड़ी हैं। सरकार की विकास पुस्तिका में भी फ्लैगशिप योजनाओं के स्तम्भ में सडक, कृषि सिंचाई, आयुष्मान भारत, स्वनिधि और जनजीवन मिशन जैसी विरासती रुटीन जॉब योजनाओं का उल्लेख है। क्या ये उपलब्धियां किसी लोकतांत्रिक सरकार के लिए वापस चुनाव में जाने के लिए पर्याप्त विजनरी विकास के आयाम के रूप में उपयोगी हो सकती हैं। खासकर तब जबकि इनमें से ज्यादातर या तो अपनी सहोदरा केन्द्रीय सरकार प्रवर्तित योजनाए हों अथवा पूर्ववर्तियों से विरासत में मिली हुई? शायद ही कोई राजनीतिक विश्लेषक इसके समर्थन में मत व्यक्त करे।

जी हां, प्रदेश में भारतीय जनता पार्टी की भजनलाल सरकार ने 15 दिसंबर को अपने कार्यकाल के दो साल पूरे किए हैं। सरकार जश्न में डूबी है लेकिन अखबारी और मीडिया विज्ञापनों को छोड़ इस अवसर को टॉकिंग प्वाइंट नहीं बना पाई। मीडिया संस्थानों के फीडबैक सर्वेक्षणों में भी आमजन के रुझान के मुताबिक सरकार का औसत कार्यकाल ही सामने आया है। सरकार की ओर से जारी विज्ञापनों और विकास पुस्तिकाओं को भी खंगालें तो खाद्य सुरक्षा, बालिका प्रोत्साहन, सरकारी भर्तियां, किसान सम्मान निधि, पीएम कुसुम, पीएम सूर्य घर आदि योजनाओं के लाभार्थियों को ही उपलब्धियों में दशार्या गया है। इनमें भी ज्यादातर केन्द्र प्रायोजित योजनाएं हैं अथवा रूटीन जॉब!

उज्ज्वला के लाभार्थियों को चार सौ पचास रुपए में गैस सिलेण्डर के निर्णय के अलावा इनमें राज्य सरकार को विशेष पहचान दिलाने जैसी कोई उपलब्धि नहीं दिखती और, शिक्षा व पंचायतराज मंत्री विभाग के मंत्री मदन दिलावर को अपवाद स्वरूप छोड़ दें तो कोई विभाग या मंत्री जनता में विशिष्ट कामकाजी पहचान नहीं बना पाया, सरकार बदलने का अहसास जनता को नहीं करा पाया।

लोकतंत्र में कोई भी सरकार हो, अपनी अलग छाप उसे स्थापित करनी ही होती है। ये छाप छूटती है उसकी अपनी महत्वाकांक्षी और जनकल्याणकारी योजनाओं से । ऐसी योजनाएं जो उस सरकार की ध्वजवाहक बनती हैं, यानी फ्लैगशिप योजनाएं। मोदी सरकार की स्वच्छ भारत मिशन, जनधन योजना, लखपति दीदी समेत तमाम दर्जनों योजनाएं, अटलजी की प्रधानमंत्री ग्राम सडक योजना, मनमोहन सरकार की मनरेगा योजना, वसुंधरा राजे की भामाशाह योजना, आई स्टार्ट, अशोक गहलोत की चिरंजीवी, शिवराजसिंह चौहान की लाड़ली बहना, आदि आदि इन नेतृत्वकताओं की सरकारों के ध्वजवाहक मॉडल हैं। प्रत्येक शासन की एक दर्जन से अधिक ऐसी योजनाएं रहती आई हैं जिनकी चर्चा आमजन जुबां पर होती हैं, जिन्हें उस शासन की यूएसपी माना जा सकता है। उत्तरप्रदेश में बाबा योगी आदित्यनाथ और असम में हिमंता बिस्व सरमा ने तो अपना अलग शासन मॉडल स्थापित कर लिया है जिनकी चर्चा देशभर में है। राजस्थान की भजनलाल सरकार की सबसे बड़ी कमजोरी यही है कि दो साल में ये अपनी कोई फ्लैगशिप योजना नहीं ला पाई। केन्द्र प्रवर्तित योजनाओं पर आश्रित है। ये जरूर है कि आंकड़ों के मुताबिक योजनाओं के क्रियान्वयन में ग्रोथ दिख रही है लेकिन फ्लैगशिप योजनाएं सरकार को अपनी पहचान दिलाती है। इनके अभाव में सरकार के नेतृत्व के विरुद्ध विजनलेस होने की धारणाएं जनता में बलवती होने लगती हैं और ऐसी धारणाएं किसी भी सरकार के लिए चिंता की ही बात होती है।

भजनलाल शर्मा ने राज्य की बागडोर संभालने के साथ ही अपराध मुक्त राजस्थान का नारा दिया था लेकिन दो साल में भरतपुर जिले में चले एंटी वायरस ऑपरेशन को छोड़ दें तो इसके अलावा आपराधिक तत्वों के खिलाफ ऐसा कोई प्रदेश व्यापी मिशन लॉन्च नहीं हुआ कि देश-प्रदेश में टॉकिंग प्वांट बन सके। हां, पुलिस की गिरफ्त में आने वाले अपराधी लंगड़ाते अवश्य चल रहे हैं लेकिन अपराधियों में खौफ जैसा कहीं कुछ नहीं दिखता। सरेराह जघन्य अपराध कारित हो रहे हैं।

यहां राज्य शासन को अच्छा या बुरा होने का तमगा देने का कतई मंतव्य नहीं लेकिन मानना ही पड़ेगा कि भजनलाल सरकार इन दो साल में ऐसा कोई काम नहीं कर सकी जिससे उसकी छवि केन्द्र की छाया से निकल कर व्यक्तिगत पहचान वाली बन सके। मुख्यमंत्री भजनलाल को इसकी चिंता अवश्य करनी चाहिए। जरूरत हो तो अपनी टीम में बदलाव करें लेकिन सरकार को विजनरी लीडरशिप की पहचान देनी वाली फ्लैगशिप योजनाएं, मिशन लॉन्च करने ही होंगे। अब भी समय है, सही समय है। औसत कामकाज की छवि से निकलकर फ्रंटफुट प्लेयर की तरह खेलना होगा। वक्त और निकल गया तो ध्यान रहे, लोकतंत्र का आज का दौर परसेप्शन का ही है। जो परसेप्शन की लड़ाई में पिछड़ गया, वास्तविक लड़ाई में उसकी राह बेहद कठिन हो जाती है। उम्मीद की जानी चाहिए कि शुभचिंतकों के स्वर सीएम भजनलाल तक पहुंचेंगे।

पर जारी सियासत के बीच सजग हुई सरकार से जगी उम्मीदें

अरावली पर्वतश्रृंखला में जैव विविधता के संरक्षण की उम्मीद भी बढ़ी है। यदि वाकई ऐसा होता है तो देश की राजधानी नई दिल्ली के लिए यह शुभ कदम होगा।

● कमलेश पांडेय

दिल्ली-एनसीआर के लिए प्राकृतिक वरदान समझी जाने वाली अरावली पर्वतश्रृंखला पर चल रहे विरोध प्रदर्शनों के दृष्टिगत और प्रस्तावित अरावली सत्याग्रह के बीच केंद्र सरकार ने विभिन्न राज्यों को स्पष्ट निर्देश दिया है कि इस पर्वतमाला क्षेत्र में अब किसी भी प्रकार के नए खनन पट्टे (माइनिंग लीज) जारी न किए जाएं। इससे साफ है कि अरावली पर्वतश्रृंखला पर जारी सियासत के दृष्टिगत केंद्र सरकार अब सजग हो चुकी है और जनहित के मद्देनजर आवश्यक दिशानिर्देश जारी किया है। इससे अरावली पर्वतश्रृंखला में जैव विविधता के संरक्षण की उम्मीद भी बढ़ी है। यदि वाकई ऐसा होता है तो देश की राजधानी नई दिल्ली के लिए यह शुभ कदम होगा। यहां के जल संरक्षण, वायु संरक्षण और पर्यावरण संरक्षण आदि की दिशा में इसके सकारात्मक प्रभाव जल्द दिखेंगे।

पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने गत बुधवार को इस बारे में एक नया आदेश जारी किया है जिसमें स्पष्ट किया हुआ है कि यह प्रतिबंध गुजरात, राजस्थान, हरियाणा और दिल्ली तक फैली पूरी अरावली श्रृंखला पर समान रूप से लागू होगा। मंत्रालय के मुताबिक, यह फैसला अरावली को पर्वतमाला के रूप में सुरक्षित रखने और इसके आसपास चल रहे अवैध खनन पर पूरी तरह से रोक लगाने के मकसद से लिया गया है। लगे हाथ सरकार ने भारतीय वानिकी अनुसंधान और शिक्षा परिषद (ICFRE) को यह भी निर्देश दिया है कि वह पूरे अरावली रीजन में ऐसे जोन की पहचान करे, जहां खनन पर पूरी तरह से बैन लगाया जाना चाहिए।

उल्लेखनीय है कि माननीय सुप्रीम कोर्ट ने हाल

में कहा था कि आसपास की जमीन से कम से कम 100 मीटर ऊंचे हिस्से को ही अरावली पहाड़ी माना जाएगा। इस प्रकार इस नए मानक से कई ऐसी पहाड़ियों पर खनन का डर पैदा हुआ जो 100 मीटर से छोटी और झाड़ियों से ढकी हुई है। यही वजह है कि पर्यावरण प्रेमियों ने इसे मुद्दा बना दिया और राजनीतिक दलों के मुखर होने से विरोध तेज हुआ हालांकि अरावली सत्याग्रह की हवा निकालने के लिये केंद्र सरकार ने समय रहते ही समुचित कदम उठा लिए। साथ ही इसके इर्द-गिर्द पुनः हरियाली वापस लाने के उपाय करने के दिशा-निर्देश जारी किए हैं। वहीं, केंद्र सरकार ने भारतीय वानिकी अनुसंधान और शिक्षा परिषद को अरावली क्षेत्र में सतत खनन (Sustainable Mining) के लिए वैज्ञानिक योजना बनाने का निर्देश दिया है। लिहाजा, यह वैज्ञानिक योजना ही अब देखेगी कि खनन का प्रकृति पर कितना बुरा असर पड़ रहा है और अरावली क्षेत्र कितना भार सह सकता है। जहा खनन हो चुका है, उन क्षेत्रों को फिर से सुधारने और वहां पर हरियाली वापस लाने के उपाय किए जाएंगे। यह दूरदर्शिता भरा कदम है जो सराहनीय है।

पर्यावरण और वन मंत्रालय ने यह भी निर्देश दिया है कि जो खदाने पहले से संचालित है, उनके लिए सुप्रीम कोर्ट के आदेशों के अनुरूप सभी पर्यावरणीय सुरक्षा उपायों का राज्य सख्ती से पालन कराए जाएं। मंत्रालय ने यह भी स्पष्ट किया है कि मौजूदा खनन गतिविधियों को भी कड़े नियमों और अतिरिक्त प्रतिबंधों के तहत कंट्रोल किया जाएगा।

बताते चलें कि अरावली अस्तित्व संकट मुख्य रूप से अवैध खनन और पर्यावरणीय क्षरण से जुड़ा है, जो 1990 के दशक में शुरू हुआ। इस दौरान राजस्थान, हरियाणा और गुजरात में खनन गतिविधियों से पहाड़ियों को भारी नुकसान पहुंचा। अरावली पर्वतमाला में अवैध खनन की शिकायतें 1990 के दशक से बढ़ने लगीं जब संगमरमर और ग्रेनाइट जैसे खनिजों के दोहन से पर्यावरण, जल संकट और वायु प्रदूषण उभरा।

अलबत्ता 1992 में सुप्रीम कोर्ट ने पहली बार हस्तक्षेप कर कुछ क्षेत्रों में खनन रोका। वहीं 2002 में सेंट्रल एम्पावर्ड कमेटी ने हरियाणा और राजस्थान में पूर्ण खनन प्रतिबंध लगाया। ततपश्चात 2003 का विवादास्पद मर्फी फॉमूर्ला लागू हुआ जिसने 100 मीटर से कम ऊंचाई वाली पहाड़ियों को खनन योग्य घोषित किया। पुनः बढ़ते विरोध के मद्देनजर 2009 में हरियाणा के कई जिलों में स्थायी प्रतिबंध लगा। जहां तक इसे मुद्दे पर हालिया विकास की बात है तो नवंबर 2025 में सुप्रीम कोर्ट ने अरावली की नई परिभाषा (100 मीटर ऊंचाई) मंजूर की जिससे खनन का खतरा फिर बढ़ गया है। यह थार रेगिस्तान के विस्तार और दिल्ली-एनसीआर के पर्यावरण को प्रभावित कर सकता है।

अरावली में अवैध खनन मुख्य रूप से 1990 के दशक से तेजी से बढ़ा जब संगमरमर, ग्रेनाइट और चूना पत्थर जैसे खनिजों की मांग बढ़ने लगी। यह राजस्थान, हरियाणा और गुजरात की सीमाओं पर जंगलों के बीच गुप्त सड़कों और रात के अंधेरे में विस्फोटों के जरिए फैला। इसके बढ़ोतरी के कारण खनन माफियाओं ने स्थानीय प्रशासन की मिलीभगत से जंगल काटे, डंपरों के लिए रास्ते बनाए और सप्ताहांतों पर बड़े पैमाने पर ब्लास्टिंग की।

आंकड़े बताते हैं कि 1975 से 2019 तक अरावली की 8% पहाड़ियां गायब हो चुकीं थीं जिसमें अवैध खनन की मुख्य भूमिका रही। 2018 तक राजस्थान में 25% अरावली प्रभावित क्षेत्र नष्ट हो चुका। नूह, चित्तौड़ा जैसे इलाकों से 8 करोड़ मीट्रिक टन से अधिक सामग्री गायब। आलम यह रहा कि सुप्रीम कोर्ट के प्रतिबंधों के बावजूद सरिस्का जैसे संरक्षित क्षेत्रों में जारी। वहीं, हालिया स्थिति यह है कि 2024-2025 में हरियाणा-राजस्थान सीमा पर 30 से अधिक गांवों में खनन माफिया सक्रिय, जिससे धूल भरी आंधियां और दिल्ली-एनसीआर में प्रदूषण बढ़ा। इससे सतर्क हुए एनजीटी ने कई बार जांच के आदेश दिए।

देखा जाए तो अरावली संकट से सबसे ज्यादा प्रभावित जिले राजस्थान, हरियाणा और गुजरात के सीमावर्ती क्षेत्रों में हैं, जहां अवैध खनन ने पहाड़ियों को नष्ट किया। राजस्थान के जिले अलवर, जयपुर, सीकर और उदयपुर जैसे जिले सबसे अधिक प्रभावित हुए जहां सरिस्का टाइगर रिजर्व के आसपास खनन माफिया सक्रिय रहे। यहां 1990 से 25% क्षेत्र नष्ट हो चुका। वहीं, हरियाणा के जिले नूह (मेवात), गुरुग्राम, महेंद्रगढ़ और रेवाड़ी में 30 से अधिक गांव खनन से तबाह, धूल भरी आंधियां दिल्ली-एनसीआर तक पहुंचीं। गुजरात के जिले साबरकांठा और बनासकांठा जिलों में चूना पत्थर खनन से अरावली का बड़ा हिस्सा गायब। कुल मिलाकर, इन जिलों में 1975-2019 तक 8% पहाड़ियां समाप्त हो चुकीं।

क्या है ये SIR?

● विवेक रंजन श्रीवास्तव

भारत निर्वाचन आयोग (ECI) द्वारा चलाई जा रही रक्मप्रक्रिया मतदाता सूची को शुद्ध और अद्यतन बनाने का एक महत्वपूर्ण कदम है जो फर्जी वोटरों को हटाने और असली मतदाताओं की पहचान सुनिश्चित करने पर केंद्रित है।

SIR का पूरा नाम Special Intensive Revision है, जिसे हिंदी में विशेष गहन पुनरीक्षण कहा जाता है। यह चुनाव आयोग की एक नियोजित प्रक्रिया है जिसमें मतदाता सूची का ब्लॉक लेवल ऑफिसर (BLO) घर-घर जाकर मतदाता सूची की जांच करते हैं, नाम, पता, उम्र, परिवार के सदस्यों का सत्यापन करते हैं। इसका मुख्य लक्ष्य डुप्लीकेट एंट्री, मृत व्यक्तियों के नाम हटाना, शिफ्ट हुए मतदाताओं या अवैध प्रविष्टियों को हटाना तथा नए बने 18+ उम्र के मतदाताओं को जोड़ना है।

SIR का तरीका..

BLO या SIR टीम घर घरआती है, अपना पहचान पत्र दिखाती है । आप परिवार के वोटिंग लिस्ट के सदस्यों के नाम, पता, परिवार विवरण, दस्तावेज (आधार, राशन कार्ड, बिजली बिल आदि दस्तावेज से) सत्यापित करवाते हैं। फॉर्म 6 (नया पंजीकरण), फॉर्म 7 (नाम हटाना), फॉर्म 8 (सुधार) के फार्म भरवाए जाते हैं।

पारदर्शिता के लिए परिवार वंशावली प्रमाण जरूरी होता है।

बिहार मॉडल पर आधारित, यह वोटर लिस्ट सत्यापन के द्वारा वर्तमान जनसांख्यिकी (शहरीकरण, पलायन) के अनुरूप सही वोटर लिस्ट बनाता है।

SIR का औचित्य..

लोकतंत्र की मजबूती के लिए मतदाता सूची की शुद्धता अनिवार्य है, क्योंकि गलत वोटर चुनावी निष्पक्षता बाधित करते हैं।

SIR से मृत, पलायन कर चुके वोटर लिस्ट से समाप्त होते हैं, यदि कोई घुसपैठिए खासकर विदेशी सीमा से जुड़े प्रदेशों में किसी तरह आ गए हैं तो दस्तावेजों के अभाव में उनकी वोटिंग का गलत अधिकार रोक दिया जाता है । भारत के वास्तविक नागरिक के वोटिंग अधिकार सुरक्षित रहते हैं । वोटिंग प्रतिशत बढ़ जाता है, क्योंकि बोगस नाम कट जाने से वोटिंग लिस्ट यथार्थ और अद्यतन बन जाती है। विपक्षी आशंकाओं के बावजूद, यह एक रूटीन अभियान है जो वार्षिक संशोधन से आगे जाकर वोट लिस्ट की गहन सफाई सुनिश्चित करता है, ताकि हर योग्य वोट का अधिकार बरकरार रहे।

सर का इतिहास..

SIR कोई नई योजना नहीं है, बल्कि दशकों पुरानी प्रक्रिया है जो चुनाव कानून के तहत हर चुनाव से पहले या आवश्यकता पर पहले भी की जाती रही है। बिहार में हाल ही में इसे सफलतापूर्वक लागू किया गया जहां 64 लाख फर्जी वोटर हटाए गए और इससे वोटिंग प्रतिशत 10% बढ़ा।

वर्ष 2025 में चुनाव आयोग ने इसे पूरे देश में विस्तार दिया, खासकर 23 साल बाद बड़े पैमाने पर यह हो रहा है लेकिन कुछ राज्य जैसे पश्चिम बंगाल और तमिलनाडु में विपक्ष ने इसका विरोध किया तथा सुप्रीम कोर्ट में इस व्यवस्था को चुनौती दी।

SIR प्रक्रिया का पहला आधिकारिक कार्यान्वयन सन 1952 में हुआ था जब भारत के पहले लोकसभा चुनाव हुए और मतदाता सूची को गहन पुनरीक्षण की आवश्यकता पड़ी । उस समय भारत निर्वाचन आयोग जो 1950 में स्थापित हुआ था, ने इसकी जिम्मेदारी ली थी । तत्कालीन मुख्य निर्वाचन आयुक्त सुकुमार सेन के नेतृत्व में मतदाता सूची शुद्ध करने का यह अभियान संपन्न हुआ था। इसके बाद यह प्रक्रिया समय-समय पर, विशेषकर बड़े चुनावों से पहले, जारी रही जैसे 2002-2004 के बीच पूरे देश में बड़े पैमाने पर सर को क्रियान्वित किया गया था।

वैश्विक आतंकवाद

पहलगाम से सिडनी तक

● डॉ आलोक कुमार

समकालीन दुनिया कई प्रकार की चुनौतियों से गुजर रही है जिनमें ग्लोबल आतंकवाद एक जटिल एवं गंभीर समस्या है जिसका सामना न केवल किसी एक देश या धर्म को बल्कि पूरी दुनिया को करना पड़ रहा है। ग्लोबल आतंकवाद संगठित हिंसा का वह रूप है जिसका उद्देश्य आम नागरिकों में 'आतंक का माहौल पैदा' करना है। कुछ विद्वानों का मानना है कि ग्लोबल आतंकवाद का उद्देश्य वैचारिक या धार्मिक लक्ष्यों की प्राप्ति करना होता है जबकि मेरा मानना है कि इसका वास्तविक उद्देश्य वैचारिक या धार्मिक लक्ष्य नहीं बल्कि आम लोगों में 'आतंक' फैलाना है क्योंकि वैचारिक या धार्मिक उद्देश्यों की पूर्ति अन्य माध्यमों से भी की जा सकती है।

इस आतंकवाद की शुरूआत कब और कैसे हुई, इस पर विद्वानों में मतभेद हैं लेकिन यह स्पष्ट है कि आतंकवाद किसी न किसी रूप में मानव इतिहास में हमेशा मौजूद रहा है। इससे बचने के लिए मानवीय सभ्यता ने निरंतर प्रयास किए हैं। लाखों लोगों ने मानव सभ्यता को बेहतर बनाने के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यदि हम इतिहास के पन्नों पर नजर डालें तो यह स्पष्ट होता है कि सत्ता, संसाधनों और पहचान के लिए हजारों हिंसक संघर्ष हुए हैं, जिनमें लाखों लोगों की जान गई है। हालांकि, विभिन्न माध्यमों के द्वारा मानवीय सभ्यता को अधिक शांतिपूर्ण और बेहतर बनाने का निरंतर प्रयास भी किया गया है।

इस संदर्भ में यह प्रश्न अक्सर उठता है कि क्या इस्लामिक समाज आतंकवाद को समाप्त करने का प्रयास नहीं कर रहे हैं? यह कहना न केवल तथ्यात्मक रूप से गलत है होगा बल्कि गैर-जिम्मेदाराना भी. इस्लामिक समाजों के भीतर भी बहुसंख्यक लोग आतंकवाद के विरोधी हैं क्योकि वह स्वयं इसके सबसे बड़े शिकार हो रहे हैं। इस्लामिक समाज में कुछ कट्टरपंथी संगठन धर्म के नाम पर निर्दोष लोगों की हत्याएँ और हिंसा को सही ठहराने की कोशिश करते हैं। जिसकी बहुसंख्यक इस्मालिक समाज द्वारा आलोचना की जाती है लेकिन इस आलोचना से सिर्फ काम नहीं चलेगा। अब महत्त्वपूर्ण सवाल यह कि कौन इस आतंकवाद का खत्म कर सकता है? इस सम्बन्ध में मेरा मानना है कि इस्लामिक आतंकवाद को खत्म करने के लिए इस्लामिक समाज को आगे आना पड़ेगा. उन्हें उस हर मान्यता का विरोध करना पड़ेगा जो मानवीय सभ्यता के विरोध में है।

भारत भी लंबे समय से आतंकवाद से पीड़ित है। सीमापार आतंकवाद और कट्टरपंथी नेटवर्क देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए गंभीर चुनौती है। साउथ एशिया टेररिज्म पोर्टल की रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2000 से लेकर दिसंबर 2025 तक भारत में कुल 24,507 आतंकवादी घटनाएँ हुईं, जिनमें 14,566 नागरिकों और 7,605 सुरक्षा कर्मियों की जान गई। ये आँकड़े केवल संख्याएँ नहीं हैं बल्कि वे उन परिवारों की पीड़ा और सामाजिक क्षति को दशार्ते हैं जिनकी भरपाई संभव नहीं है। 22 अप्रैल 2025 को कश्मीर घाटी के पहलगाम में हुआ आतंकवादी हमला इसी त्रासदी का एक और उदाहरण है। इस हमले में 25 हिंदू और एक मुस्लिम, कुल 26 निर्दोष लोगों की हत्या कर दी गई। यह घटना स्पष्ट रूप से दिखाती है आतंकवाद भारत के लिए गंभीर चुनौती है इसे तब तक खत्म नहीं किया जा सकता जब तक आतंकवाद पाकिस्तान में न खत्म हो क्योंकि पाकिस्तानी आतंकवाद से न केवल दक्षिण एशिया बल्कि पूरी दुनिया प्रभावित है।

इसी आतंकवाद का प्रभाव ऑस्ट्रेलिया में देखने को मिला। 14 दिसंबर को ऑस्ट्रेलिया के सिडनी शहर में बोंडी बीच के समीप स्थित आर्चर पार्क में यहूदी समुदाय को लक्ष्य बनाकर किया गया आतंकवादी हमला इस तथ्य को उजागर करता है। ये यहूदी लोग हनुक्का पर्व के आयोजन हेतु एकत्रित हुए थे। ये लोग हनुक्का पर्व को 'रोशनी का त्योहार' के रूप में मानते है। ऐसे शांतिपूर्ण धार्मिक आयोजनों को निशाना बनाना यह स्पष्ट रूप से दशार्ता है कि आतंकवाद का उद्देश्य केवल शारीरिक क्षति पहुँचाना नहीं, बल्कि व्यापक स्तर पर 'टेरर का माहौल पैदा करना होता है'। पहलगाम से सिडनी तक फैली आतंकवादी घटनाएँ हमें यह याद दिलाती हैं कि यह एक वैश्विक समस्या है जिसका समाधान भी वैश्विक स्तर पर किये गए प्रयासों से ही निकल सकता है। इसलिए आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई केवल किसी एक देश की नहीं बल्कि पूरी मानवता की साझा जिम्मेदारी है। जब तक दुनिया के समाज मिलकर इस प्रकार की घटनाओं के खिलाफ खड़े नहीं होंगे, तब तक 'रोशनी के त्योहार' अंधेरे में डूबते रहेंगे।

कटघरे में सियासत

विधायक निधि या वसूली निधि?

राजस्थान के एक समाचार पत्र से जुड़े रिपोर्टर द्वारा किए गए स्टिंग ऑपरेशन में प्रदेश के तीन विधायकों की कथित बातचीत सामने आने के बाद यह बहस बेमानी हो चुकी है कि भ्रष्टाचार है या नहीं। असली सवाल अब यह है कि क्या यह पहली बार उजागर हुआ है या पहली बार कैमरे में कैद हुआ है।

● बाबूलाल नागा

राजस्थान की राजनीति एक बार फिर उस सवाल के कटघरे में खड़ी है जो भारतीय लोकतंत्र को भीतर से खोखला करता रहा है - क्या जनप्रतिनिधि जनता की सेवा के लिए चुने जाते हैं या सत्ता को निजी कमाई का साधन बनाने के लिए? जनता के विकास के लिए बनी विधायक स्थानीय क्षेत्र विकास निधि अब सवालों के घेरे में नहीं बल्कि सीधे आरोपों के कठघरे में है। राजस्थान के एक समाचार पत्र से जुड़े रिपोर्टर द्वारा किए गए स्टिंग ऑपरेशन में प्रदेश के तीन विधायकों की कथित बातचीत सामने आने के बाद यह बहस बेमानी हो चुकी है कि भ्रष्टाचार है या नहीं। असली सवाल अब यह है कि क्या यह पहली बार उजागर हुआ है या पहली बार कैमरे में कैद हुआ है।

यह मामला केवल तीन विधायकों तक सीमित नहीं है बल्कि यह पूरी राजनीतिक व्यवस्था, प्रशासनिक निगरानी और जवाबदेही तंत्र पर सवाल खड़े करता है। जिस निधि का उद्देश्य स्थानीय विकास, बुनियादी सुविधाओं और जनकल्याणकारी कार्यों को गति देना था, वही निधि यदि भ्रष्टाचार का माध्यम बन जाए तो यह लोकतंत्र के लिए खतरनाक संकेत है।

विधायक निधि की मंशा साफ थी। गांवों की सड़कें सुधरें, कस्बों में नालियां बनें, स्कूलों और अस्पतालों की जरूरतें पूरी हों लेकिन समय के साथ यह निधि विकास से ज्यादा प्रभाव और नियंत्रण का हथियार बनती चली गई। वर्षों से यह आरोप लगता रहा है कि- ठेकेदार तय होते हैं, कार्यों के एस्टीमेट जानबूझकर बढ़ाए जाते हैं, बिना काम हुए भुगतान हो जाता है और सबसे अहम, कमीशन संस्कृति फलती-फूलती है। अब जब उसी निधि से जुड़े कामों के बदले कमीशन मांगने की बातें सामने आई हैं तो यह मानने में हिचक नहीं होनी चाहिए कि सिस्टम कहीं न कहीं सड़ चुका है। यह केवल तीन नामों का मामला नहीं है, यह उस सोच का मामला है जिसमें जनता के पैसे को निजी मोलभाव का जरिया समझ लिया गया है।

स्टिंग ऑपरेशन पर सवाल उठाना आसान है लेकिन सवाल यह भी है कि अगर कैमरा न होता तो क्या यह बातचीत कभी बाहर आती। बंद कमरों में होने वाली सौदेबाजी वर्षों से चलती रही है. फर्क सिर्फ इतना है कि इस बार रिकॉर्ड बटन दबा हुआ था। इसीलिए इस पूरे प्रकरण को मीडिया ट्रायल कहकर खारिज करना भी उतना ही सुविधाजनक है जितना खुद को पाक-साफ घोषित कर देना। सच यह है कि स्टिंग ने व्यवस्था के उस चेहरे को दिखाया है जिसे जनता रोज महसूस करती है लेकिन साबित नहीं कर पाती।

इस पूरे घटनाक्रम का सबसे बड़ा नुकसान उस भरोसे को होता है, जिस पर लोकतंत्र टिका है। चुनाव के वक्त जिन विधायकों को जनता अपना प्रतिनिधि मानकर भेजती है, उन्हीं पर अगर वसूली के आरोप लगें तो यह विश्वास टूटता है। यह टूटन खामोश होती है लेकिन गहरी होती है। लोग राजनीति से दूरी बनाने लगते हैं, व्यवस्था से उम्मीद छोड़ देते हैं और यही लोकतंत्र की सबसे बड़ी हार होती है।

राजस्थान में यह सवाल और भी चुभता है क्योंकि राज्य के कई इलाकों में आज भी बुनियादी सुविधाएं अधूरी हैं। राजस्थान जैसे राज्य, जहां शिक्षा, स्वास्थ्य, पानी और रोजगार जैसे बुनियादी मुद्दे आज भी चुनौती हैं, ऐसे में अगर विकास के लिए तय पैसा भी कमीशन की भेंट चढ़ जाए, तो यह केवल भ्रष्टाचार नहीं बल्कि सामाजिक अन्याय है। यह सीधे तौर पर उस गरीब नागरिक के हक पर चोट है जो सरकार की योजनाओं पर निर्भर है। विकास निधि में भ्रष्टाचार गरीब और हाशिए पर खड़े व्यक्ति से उसका हक छीनने जैसा है। राजनीतिक दलों की भूमिका इस मामले में सबसे ज्यादा संदेह के घेरे में है। विपक्ष का काम आरोप लगाना है, सत्ता पक्ष का बचाव करना लेकिन जनता अब इस खेल को पहचानने लगी है क्योंकि इस मामले में पक्ष व विपक्ष दोनों की तरफ के विधायकों पर कमीशन मांगने के आरोप लगे हैं। सवाल यह नहीं है कि विधायक किस पार्टी का है. सवाल यह है कि क्या पार्टी अपने ही लोगों पर कार्रवाई करने की हिम्मत रखती है। अगर जांच के नाम पर फाइलें चलती रहीं और आरोपी संरक्षण में रहे तो यह मान लेना चाहिए कि राजनीति ने आत्मशुद्धि का मौका गंवा दिया।

कानून के स्तर पर भी यह मामला हल्का नहीं है। विधायक निधि से जुड़े मामलों में जनप्रतिनिधि लोक सेवक माने जाते हैं। कमीशन मांगना कोई नैतिक चूक नहीं, बल्कि सीधा अपराध है। ऐसे में जांच एजेंसियों की स्वतंत्रता और निष्पक्षता की परीक्षा भी इसी मामले से होगी। अगर जांच धीमी हुई, दिशाहीन हुई या दबाव में बदली गई, तो यह संदेश जाएगा कि कानून केवल कमजोर के लिए है।

यह स्टिंग ऑपरेशन केवल सनसनीखेज खबर बनकर खत्म नहीं होना चाहिए। यह समय है यह तय करने का कि विधायक निधि पारदर्शिता का उदाहरण बनेगी या भ्रष्टाचार का स्थायी स्रोत। जब तक हर काम की जानकारी सार्वजनिक नहीं होगी, जब तक निगरानी व्यवस्था मजबूत नहीं होगी, तब तक ऐसे मामले सामने आते रहेंगे और हर बार भरोसा थोड़ा और टूटेगा।

राजस्थान की राजनीति आज एक निर्णायक मोड़ पर खड़ी है। यह तय करना होगा कि सत्ता सेवा का माध्यम बनेगी या सौदेबाजी का। विधायक निधि जनता के विकास के लिए है या नेताओं की सुविधा के लिए- इस सवाल का जवाब अब शब्दों से नहीं, कार्रवाई से दिया जाना चाहिए। अगर इस बार भी मामला दब गया तो यह सिर्फ तीन विधायकों की कहानी नहीं रहेगी बल्कि पूरे सिस्टम पर लगे एक स्थायी दाग के रूप में दर्ज हो जाएगी।

जनता अब देख रही है और शायद पहले से ज्यादा जागरूक होकर सवाल भी पूछ रही है। अब जवाब देने की बारी सत्ता की है।

(लेखक भारत अपडेट के संपादक हैं)

जीपीएस स्पूफिंग

भारत में विमानों के लिए बड़ा खतरा

जीपीएस विमान को सटीक लोकेशन और दिशा दिखाता है। किसी भी गड़बड़ी से विमान भटक सकता है जो विनाशकारी दुर्घटना का कारण बन सकता है। दिल्ली, मुंबई, कोलकाता जैसे प्रमुख हवाई अड्डों पर हाल की घटनाओं ने इस खतरे को उजागर किया है।

● ज्ञान चंद पाटनी

पिछले दो वर्ष के दौरान भारत में विमानों के जीपीएस सिस्टम के साथ 1,951 बार छेड़छाड़ की घटनाएं दर्ज की गई हैं। सरकार ने ही यह आंकड़ा लोकसभा में उजागर किया है। जाहिर है जीपीएस छेड़छाड़ भारत के तेजी से बढ़ते विमानन क्षेत्र के लिए बड़ा खतरा है। जिस नियोजित तरीके से जीपीएस स्पूफिंग हो रही है, उससे भारत से शत्रुता रखने वाले देशों की तरफ भी संदेह की सूई घूम रही है। साइबर विशेषज्ञों का मानना है कि इस तरह के काम के लिए जितने संसाधन चाहिए, वे किसी छोटे–मोटे समूह के लिए संभव नहीं। इस तरह की कार्रवाई दुश्मन देशों की शह और मदद से करना आसान है। जीपीएस सिस्टम से छेड़छाड़ होने की बात स्वीकारना ही काफी नहीं, सरकार को विमानों की सुरक्षा के सभी आवश्यक इंतजाम भी करने होंगे।

जीपीएस विमान को सटीक लोकेशन और दिशा दिखाता है। किसी भी गड़बड़ी से विमान भटक सकता है जो विनाशकारी दुर्घटना का कारण बन सकता है। दिल्ली, मुंबई, कोलकाता जैसे प्रमुख हवाई अड्डों पर हाल की घटनाओं ने इस खतरे को उजागर किया है। जीपीएस स्पूफिंग एक तरह का साइबर हमला है जिसमें अपराधी नकली सैटेलाइट सिग्नल भेजकर विमान के नेविगेशन सिस्टम को धोखा देते हैं। सामान्य जैमिंग से अलग, स्पूफिंग में असली सिग्नल के साथ नकली सिग्नल मिश्रित कर दिए जाते हैं, जिससे सिस्टम गलत लोकेशन दिखाता है। उदाहरण के लिए पायलट को लग सकता है कि विमान सही रनवे पर लैंड कर रहा है जबकि वह गलत दिशा में जा रहा हो। जाहिर है इससे विमान गलत दिशा में मुड़ सकता है, टकराव हो सकता है या गलत लैंडिंग हो सकती है। नकली सिग्नल विमान के फ्लाइट मैनेजमेंट सिस्टम (एफएमएस) को गुमराह करते हैं, जिससे गलत ऊंचाई, मौसम या रनवे डेटा मिलता है।

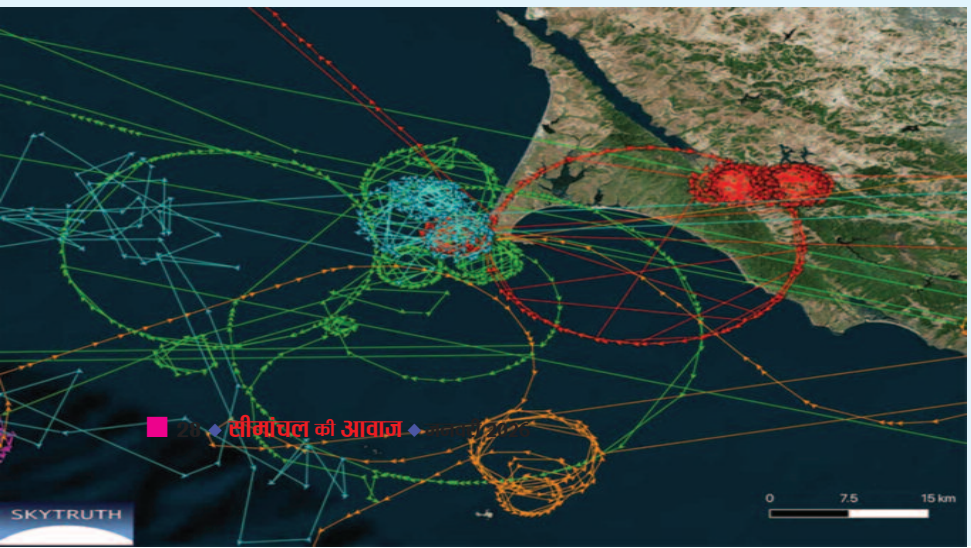

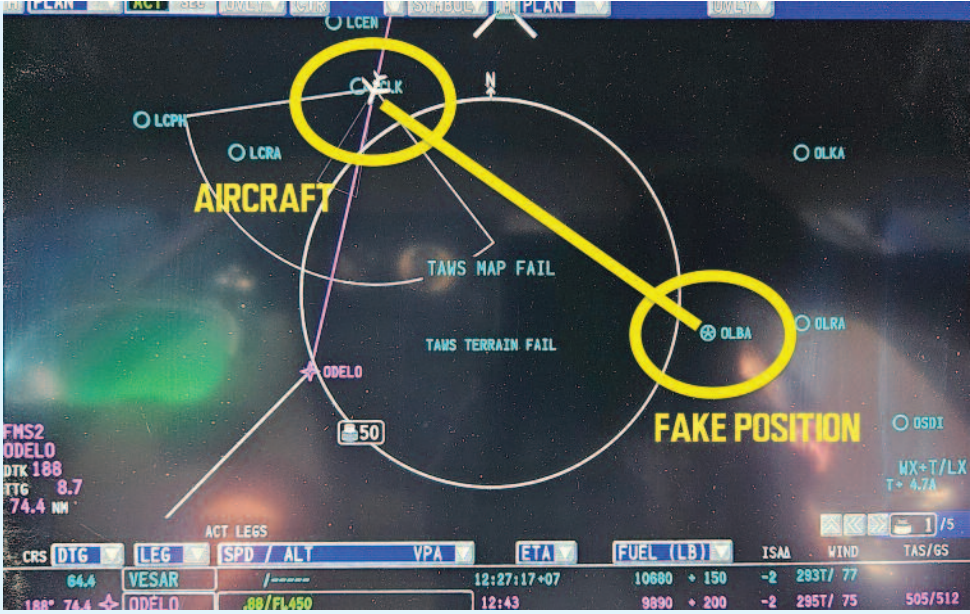

जीपीएस सिग्नल पृथ्वी से 20,000 किलोमीटर ऊपर सैटेलाइट से आते हैं और उनकी शक्ति बहुत कम होती है। इसे आसानी से ओवरराइड किया जा सकता है। भारत जैसे देश में, जहां उड़ानें घनी हैं, यह खतरा कई गुना बढ़ जाता है।

गौरतलब है कि सरकार ने संसद में दूसरी बार जीपीएस स्पूफिंग की बात स्वीकार की है। 1 दिसंबर को भी राज्यसभा में नागरिक उड्डयन मंत्री किंजरापु राममोहन नायडू ने दिल्ली के इंदिरा गांधी अंतरराष्ट्रीय एयरपोर्ट पर 7 नवंबर की घटना का जिक्र किया था। यहां ऑटोमेटिक मैसेज स्विचिंग सिस्टम (एएमएसएस) प्रभावित हुआ, जिससे 12 घंटे से अधिक समय तक फ्लाइट संचालन ठप रहा। 800 से ज्यादा उड़ानें लेट हुईं और 20 उड़ानों को रद्द करना पड़ा। यात्रियों की लंबी कतारें लगीं। इसका असर मुंबई, अमृतसर, हैदराबाद तक हुआ।

एएमएसएस एयर ट्रैफिक कंट्रोल (एटीसी) से जुड़ा कंप्यूटर नेटवर्क है जो फ्लाइट प्लान, ऊंचाई, फ्यूल, मौसम अपडेट आदि रीयल-टाइम मैसेज भेजता है। सिस्टम फेल होने पर मैन्युअल काम करना पड़ता है जिससे काम का भार बढ़ जाता है और गलती होने की आशंका भी रहती है। दिल्ली के अलावा कोलकाता, अमृतसर, मुंबई, हैदराबाद, बेंगलुरु, चेन्नई में भी इस तरह की शिकायतें मिलीं। मंत्री नायडू ने इसे साइबर हमला माना और एएआई को एडवांस साइबर सिक्योरिटी लागू करने को कहा गया है। बताया गया कि राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल भी मामले की निगरानी कर रहे हैं।

साइबर सुरक्षा कंपनी क्लाउडएसईके की रिपोर्ट में कहा गया कि इतने बड़े पैमाने पर नकली सिग्नल फैलाने के लिए सैन्य-स्तरीय उपकरण और ऊर्जा चाहिए जो सामान्यतः अपराधिक गिरोहों के पास नहीं होती। इससे यह आशंका बलवती होती है कि ये 'किराए के साइबर समूह' हैं जो दुश्मन देशों के लिए काम करते हैं। इशारा मिलने पर ये रेलवे, शिपिंग, एविएशन को निशाना बनाते हैं। दुनियाभर में ऐसे मामले बढ़े हैं। उदाहरण के तौर पर क्राउडस्ट्राइक आउटेज जुलाई 2024 में हुआ एक बड़ा वैश्विक आईटी व्यवधान था। यह साइबर हमला नहीं था। असल में क्राउडस्ट्राइक के फाल्कन सुरक्षा सॉफ्टवेयर के एक त्रुटिपूर्ण अपडेट के कारण ऐसा हुआ था। इससे दुनिया भर के लाखों माइक्रोसॉफ्ट विंडोज कंप्यूटर क्रैश हो गए और 'ब्लू स्क्रीन ऑफ डेथ' दिखने लगी। इससे एयरलाइंस, वित्तीय सेवाएं और स्वास्थ्य सेवाएं सहित कई उद्योग प्रभावित हुए और भारी वित्तीय नुकसान हुआ। अगस्त 2023 में यूके एटीसी फेलियर से 600 उड़ानें रुकीं।

इस बीच अंतरराष्ट्रीय वायु परिवहन संघ (आईएटीए) ने जीपीएस छेड़छाड़ की घटनाओं में बढ़ोतरी पर चिंता जताई है और कहा है कि पायलटों को अधिक सतर्कता बरतने की आवश्यकता है। यह संगठन विश्व भर की करीब 360 विमानन कंपनियों का प्रतिनिधित्व करता है। जाहिर है संकट गंभीर है और इससे निपटने के लिए बहुस्तरीय रणनीति चाहिए। साइबर विशेषज्ञों का मानना है कि ग्राउंड-बेस्ड नेविगेशन को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। रेडियो टावरों से हाई-फ्रीक्वेंसी सिग्नल इस्तेमाल किए जाएं। ये जीपीएस से कई गुना मजबूत होते हैं और जाम-प्रूफ भी हैं। इमारतों या सुरंगों में भी काम करते हैं। विदेशी जीपीएस पर निर्भरता कम की जानी चाहिए। स्वदेशी क्षेत्रीय नेविगेशन सैटेलाइट सिस्टम नाविक को मजबूत करके विमानों को स्वदेशी नेविगेशन से लैस किया जाना चाहिए।

इस तरह के किसी भी हादसे से बचने के लिए साइबर सिक्योरिटी मजबूत करने पर ध्यान दिया जाए। भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण (एएआई) को एएमएसएस जैसे सिस्टम को तुरंत अपग्रेड करना होगा। पायलटों और एयर ट्रैफिक कंट्रोल यानी एटीसी के स्टाफ को स्पूफिंग की पहचान करने की ट्रेनिंग देना भी आवश्यक हो गया है। अमेरिका और इजरायल जैसे देशों से तकनीक इससे जुड़ी आधुनिक तकनीक ली जा सकती है। साइबर डिफेंस सेंटर स्थापित करने का भी समय आ गया है।

हादसों से बचने के लिए हर क्षेत्र में सतर्कता ही सुरक्षा का नियम ज्यादा कारगर है। ग्राउंड नेविगेशन, स्वदेशी तकनीक और मजबूत साइबर ढांचे से विमान जीपीएस स्पूफिंग से बच सकते हैं। सरकार, नागरिक उड्डयन महानिदेशालय (डीजीसीए), एएआई को एकजुट होकर काम करना होगा अन्यथा, कभी भी बड़ा हादसा हो सकता है। समय को देखते हुए भारत का आकाश सुरक्षित रखना राष्ट्रीय प्राथमिकता है।

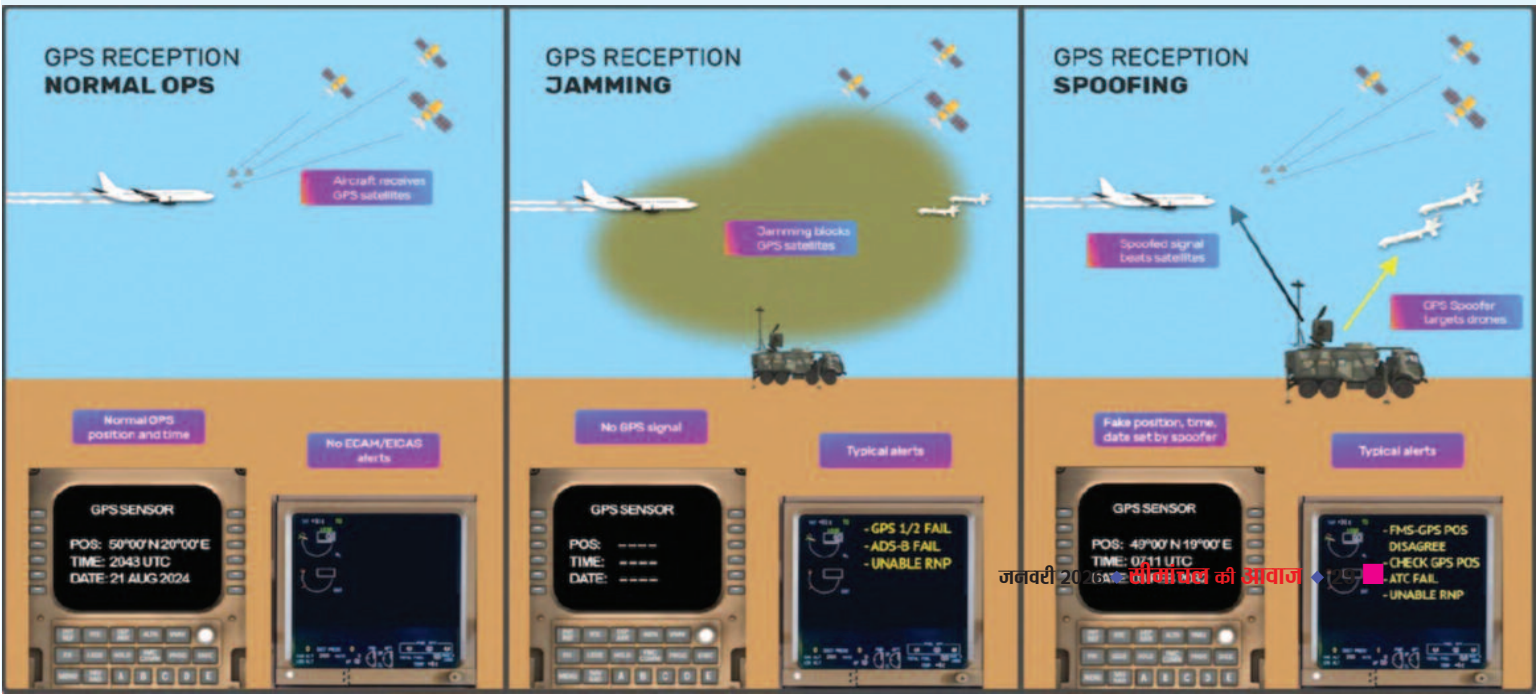

मनरेगा से विकसित भारत

सिर्फ नाम बदला या बदली पूरी कहानी?

● डेस्क

भारतीय राजनीति और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के इतिहास में दिसंबर 2025 का यह हफ्ता बेहद अहम बन गया है। देश की सबसे बड़ी और महत्वाकांक्षी ग्रामीण रोजगार योजना–महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (MGNREGA) – अब इतिहास के पन्नों में दर्ज होने जा रही है। केंद्र की मोदी सरकार ने संसद के शीतकालीन सत्र में इस योजना का नाम और स्वरूप बदलने के लिए एक नया विधेयक पेश किया है, जिसने देश भर में एक नई राजनीतिक और सामाजिक बहस छेड़ दी है।

इस नए बदलाव का नाम है– 'विकसित भारत गारंटी फॉर रोजगार एंड आजीविका मिशन (ग्रामीण)' (Viksit Bharat Guarantee for Rozgar and Ajeevika Mission - Gramin), जिसे संक्षेप में VB-G RAM G (वीबी-जी राम जी) बिल, 2025 कहा जा रहा है।

आखिर क्या है यह नया बिल, क्यों बदला गया नाम, और इसका देश के करोड़ों ग्रामीण मजदूरों पर क्या असर पड़ेगा।

2. नाम बदलने की जरूरत क्यों पड़ी? सरकार का तर्क

सरकार का कहना है कि 2005 में जब मनरेगा (तब नरेगा) शुरू हुआ था, तब भारत की स्थिति अलग थी। आज का भारत 'विकसित भारत 2047' के लक्ष्य की ओर बढ़ रहा है। सरकार के मुताबिकः

क्या है नया बदलाव ?

16 दिसंबर 2025 को संसद में पेश किए गए इस विधेयक के अनुसार, 2005 के पुराने मनरेगा कानून को निरस्त किया जाएगा और उसकी जगह यह नया कानून लेगा। शुरूआती दौर में मीडिया में खबरें थीं कि योजना का नाम 'पूज्य बापू ग्रामीण रोजगार योजना' रखा जाएगा, लेकिन संसद में जो बिल पेश किया गया, उसका आधिकारिक नाम 'VB-G RAM G' है। इस नए कानून में केवल नाम ही नहीं, बल्कि योजना के ढांचे में भी कुछ बुनियादी बदलाव प्रस्तावित हैंः

रोजगार के दिनों में बढ़ोतरीः

पुराने कानून में साल भर में 100 दिनों के रोजगार की गारंटी थी। नए बिल में इसे बढ़ाकर 125 दिन करने का प्रस्ताव है। यह ग्रामीण मजदूरों के लिए एक बड़ी राहत की खबर मानी जा रही है।

फंडिंग का नया गणितः

सबसे बड़ा और विवादास्पद बदलाव फंडिंग पैटर्न में है। मनरेगा के तहत केंद्र सरकार 90% और राज्य सरकार 10% खर्च वहन करती थी। रिपोर्ट्स के मुताबिक, नए कानून में केंद्र अपनी हिस्सेदारी घटाकर 60% कर सकता है, जबकि राज्यों को 40% खर्च उठाना होगा।

डिजिटल निगरानीः

नए कानून में एआई आधारित ऑडिट, जीपीएस मॉनिटरिंग और डिजिटल हाजिरी को अनिवार्य बनाने का प्रावधान है, ताकि भ्रष्टाचार रोका जा सके।

विरासत और विकास के बीच की लकीर

'मनरेगा' से 'वीबी-जी राम जी' तक का यह सफर सिर्फ एक नाम बदलने की कहानी नहीं है। यह भारत की बदलती राजनीति और प्राथमिकताओं का प्रतीक है। एक तरफ सरकार इसे आधुनिक और विकसित भारत की जरूरत बता रही है, तो दूसरी तरफ विपक्ष इसे ऐतिहासिक प्रतीकों पर हमला मान रहा है।

सच यह है कि योजना का नाम चाहे 'महात्मा गांधी' पर हो या 'विकसित भारत' पर, उसकी सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि क्या वह वास्तव में ग्रामीण गरीब की थाली में रोटी और जेब में पैसा पहुंचा पाती है या नहीं। अगर 125 दिन का रोजगार हकीकत बनता है और भुगतान समय पर होता है, तो नाम बदलने का दर्द शायद कम हो जाए। लेकिन अगर यह बदलाव सिर्फ कागजी साबित हुआ और राज्यों पर बोझ बढ़ा, तो यह नई बोतल में पुरानी शराब से भी बदतर साबित हो सकता है।

आने वाले दिनों में संसद में इस बिल पर होने वाली बहस और संशोधनों पर पूरे देश की नजर रहेगी। क्या 'गांधी' का नाम हटने से गांधीवादी 'अंत्योदय' (अंतिम व्यक्ति का उदय) का विचार भी कमजोर हो जाएगा? यह एक बड़ा सवाल है जिसका जवाब भविष्य के गर्भ में है।

ग्रामीण भारत बदल चुका है:

अब ग्रामीण भारत में गरीबी का स्तर वह नहीं है जो 20 साल पहले था। डिजिटल पहुंच बढ़ी है और लोगों की आकांक्षाएं सिर्फ गड्ढे खोदने तक सीमित नहीं हैं।

आजीविका पर जोर:

नया कानून सिर्फ 'रोजगार' की बात नहीं करता, बल्कि 'आजीविका' और कौशल विकास पर भी जोर देता है।

आधुनिकीकरण:

पुराने कानून में कई खामियां थीं जिनका फायदा उठाकर लीकेज होता था। नया कानून तकनीकी रूप से ज्यादा सक्षम होगा।

3. 'महात्मा' का नाम हटाने पर सियासी घमासान

जैसे ही इस बिल की जानकारी सामने आई, विपक्ष ने सरकार पर तीखा हमला बोल दिया। कांग्रेस महासचिव प्रियंका गांधी और सांसद जयराम रमेश ने इसे ₹महात्मा गांधी की विरासत को मिटाने की साजिश₹ करार दिया है।

विपक्ष की प्रमुख आपत्तियां:

गांधी का अपमान: मनरेगा के नाम से 'महात्मा गांधी' हटाना सिर्फ एक नाम परिवर्तन नहीं, बल्कि विचारधारा की लड़ाई है। कांग्रेस का आरोप है कि सरकार गांधी-नेहरू परिवार द्वारा शुरू की गई योजनाओं का नाम बदलकर उनका श्रेय खुद लेना चाहती है।

राज्यों पर बोझ: अगर फंडिंग का पैटर्न 60:40 किया जाता है, तो पहले से कर्ज में डूबे राज्यों की कमर टूट जाएगी। इसका सीधा असर यह होगा कि राज्य सरकारें फंड की कमी के कारण मजदूरों को समय पर भुगतान नहीं कर पाएंगी।

मजदूरों के हक पर डाका: सामाजिक कार्यकताओं का कहना है कि पुराने कानून में 'अधिकार' की जो ताकत थी, उसे नए कानून में कमजोर किया जा सकता है।

4. मनरेगा का इतिहास: एक नजर

इस विवाद को समझने के लिए हमें थोड़ा पीछे जाना होगा।

2005: यूपीए-1 सरकार ने 'राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम' लागू किया। इसका उद्देश्य ग्रामीण परिवारों को साल में कम से कम 100 दिन का अकुशल श्रम देना था।

2009: महात्मा गांधी की जयंती के अवसर पर इसका नाम बदलकर (मनरेगा) कर दिया गया।

सफलता और आलोचना: विश्व बैंक ने कभी इसे 'दुनिया का सबसे बड़ा सार्वजनिक कार्य कार्यक्रम' कहा था। हालांकि, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 2015 में संसद में इसे 'कांग्रेस की विफलताओं का स्मारक' बताया था। यह विडंबना ही है कि आज वही सरकार इसे नए रंग-रूप में अपना रही है।

5. आम आदमी और मजदूर पर इसका क्या असर होगा?

राजनीतिक बहस अपनी जगह है, लेकिन गांव के उस मजदूर के लिए क्या बदलेगा जो तपती धूप में कुदाल चलाता है?

सकारात्मक पहलू: अगर 125 दिन का रोजगार सच में मिलता है, तो एक मजदूर परिवार की सालाना आय में 5,000 से 7,000 रुपये तक की बढ़ोतरी हो सकती है। यह महंगाई के दौर में एक बड़ा सहारा होगा।

नकारात्मक पहलू: नई 'डिजिटल व्यवस्था' गरीब और अशिक्षित मजदूरों के लिए सिरदर्द बन सकती है। आधार कार्ड लिंकिंग और ऑनलाइन हाजिरी की दिक्कतों (तकोनिकी ग्लिच) के कारण पहले भी लाखों मजदूरों का वेतन अटका है। अगर फंडिंग के मुद्दे पर केंद्र और राज्य आपस में लड़ते रहे, तो अंत में पिसेगा गरीब मजदूर ही। पश्चिम बंगाल इसका ताजा उदाहरण है, जहां केंद्र-राज्य विवाद के कारण मनरेगा का फंड लंबे समय तक रुका रहा।

नाम, नीति, नीयत और राजनीति

जमीन पर हालात नहीं बदलते। पुरानी योजनाओं को नए नाम देकर प्रचारित किया जाता है और जनता को भ्रमित किया जाता है कि नई योजनाएँ शुरू की गई हैं। इसके साथ ही विज्ञापन और ब्रांडिंग पर भारी सरकारी खर्च का प्रश्न भी उठाया जाता है।

● डॉ घनश्याम बादल

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना एक्ट यानी 'मनरेगा' का नाम बदलकर 'विकसित भारत गारंटी फॉर रोजगार एंड आजीविका मिशन ग्रामीण यानी संक्षेप में 'जी राम जी' कर देने के साथ ही एक बार फिर से विभिन्न योजनाओं के नाम बदलने से खड़ा होने वाला विवाद सुर्खियों में है । जहां सत्ता पक्ष इसे जरूरी बता रहा है वहीं विपक्ष इतिहास को पुनर्परिभाषित करने का षड्यंत्र तो कह ही रहा है, साथ ही साथ राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को भी उपेक्षित करने का आरोप सत्ता पक्ष पर लगा रहा है।

भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में सरकारें आती-जाती रहती हैं किंतु शासन की निरंतरता योजनाओं के माध्यम से बनी रहती है। कहने के लिए तो इन योजनाओं का उद्देश्य आम नागरिक के जीवन में ठोस बदलाव लाना होता है परंतु पिछले दो दशकों में नई सरकारों द्वारा पुरानी सरकारों के द्वारा चलाई जा रही योजनाओं के नाम बदलकर उसका राजनीतिक श्रेय लेने का 'खेल' भी लगातार देखने में आ रहा है ।

ऐसा नहीं है कि यह 'खेल' केवल वर्तमान सरकार तक सीमित हो बल्कि यह भी एक तथ्य और सत्य है कि इससे पूर्व की सरकारें भी ऐसा करती रही हैं और जिस तरह के आरोप अब विपक्ष लगा रहा है. पहले भी वर्तमान सरकार के दल जब विपक्ष में थी, वें भी ऐसे ही आरोप लगाया करते थे मगर सत्ता में आने के बाद वे स्वयं इसी प्रवृत्ति एवं रास्ते पर चलते दिखाई दे रहे हैं।

प्रश्न यह नहीं है कि नाम बदले गए या नहीं बल्कि यह है कि क्या नाम परिवर्तन के साथ नीति, क्रियान्वयन और परिणाम भी बदले? यदि पलटकर देखें तो नाम बदलने की शुरूआत आज की सरकार से ही नहीं हुई है अपितु 2004 के बाद यूपीए सरकार के कार्यकाल में भी ऐसा खूब हुआ। उदाहरण के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना ' नरेगा' का नाम बदलकर महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना 'मनरेगा' किया गया। इसी प्रकार कई योजनाओं को तत्कालीन नेताओं या ऐतिहासिक व्यक्तित्वों से जोड़ा गया। उस समय यह तर्क दिया गया कि इससे योजनाओं को नैतिक प्रेरणा और पहचान मिलेगी।

वर्तमान सरकार के कार्यकाल में यह प्रवृत्ति कहीं अधिक व्यापक दिखाई देती है। इंदिरा आवास योजना का नाम बदलकर प्रधानमंत्री आवास योजना, राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना को आयुष्मान भारत, निर्मल भारत अभियान को स्वच्छ भारत मिशन, जवाहरलाल नेहरू शहरी नवीनीकरण मिशन को अमृत योजना और मध्याह्न भोजन योजना को प्रधानमंत्री पोषण योजना में बदला गया। स्पष्ट है कि नाम परिवर्तन करना सत्ता परिवर्तन के साथ एक राजनीतिक श्रेय लेने एवं दूसरी सरकारों को उनके श्रेय से वंचित करने की प्रवृत्ति बन चुकी है और इस प्रवृत्ति के कीमत चुकानी पड़ती है देश को ।

इस संदर्भ में वर्तमान सरकार का दृष्टिकोण अपेक्षाकृत स्पष्ट है। अधिकांश योजनाओं के नाम में 'प्रधानमंत्री' या 'मिशन' शब्द जोड़ा गया। सरकार का तर्क है कि इससे योजनाओं को राष्ट्रीय पहचान मिलती है, जवाबदेही बढ़ती है और लाभार्थियों को यह स्पष्ट होता है कि योजना केंद्र सरकार की है। सरकार कहती है कि नाम परिवर्तन केवल प्रतीकात्मक नहीं बल्कि इन योजनाओं को अधिक व्यापक एवं लोक कल्याणकारी तथा समझने में आसान बनाना है। उदाहरण के लिए, आयुष्मान भारत योजना के अंतर्गत स्वास्थ्य बीमा की राशि को पहले की तुलना में बढ़ाया गया। पहले इस योजना के अंतर्गत केवल 30 से 40 हजार रुपए तक की सहायता मिल पाती थी जबकि अब यह सहायता ₹5 लाख तक बढ़ा दी गई है। प्रधानमंत्री आवास योजना में लक्ष्य और समय सीमा को स्पष्ट किया गया है । स्वच्छ भारत मिशन को केवल शौचालय निर्माण तक सीमित न रखकर व्यवहार परिवर्तन अभियान के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

नाम परिवर्तन के संदर्भ में पूर्ववर्ती सरकारों का दृष्टिकोण योजनाओं को प्रायः नेताओं के नाम से जोड़कर एक वैचारिक संदेश देने का प्रयास होता था । इंदिरा गांधी, राजीव गांधी, जवाहरलाल नेहरू जैसे नामों के साथ योजनाएँ जोड़ना उस राजनीतिक धारा को मजबूत करता था जो स्वतंत्रता आंदोलन और उसके बाद की नीतियों को अपनी वैधता का आधार मानती थी। हालांकि वर्तमान सरकार ने भी कई योजनाओं के नाम दीनदयाल उपाध्याय और अटल बिहारी वाजपेई के नाम पर किए हैं, यानी जब जैसा सुविधाजनक लगे, राजनीतिक दल सरकार में आकर वैसा ही करने लगते हैं और यह प्रवृत्ति बहुत पहले से चली आ रही है।

पहले भी आलोचनाएँ हुईं कि योजनाओं के नाम में व्यक्तियों का अत्यधिक उपयोग योजनाओं को राजनीतिक रंग देता है। अंतर केवल इतना है कि तब आलोचना अपेक्षाकृत सीमित थी जबकि आज मल्टीमीडिया, इलेक्ट्रॉनिक एवं सोशल मीडिया की उपस्थिति व सक्रियता की वजह से यह एक बड़े राजनीतिक विमर्श का विषय बन रही है।

विपक्ष का सबसे बड़ा आरोप यह है कि नाम बदलने से

जमीन पर हालात नहीं बदलते। पुरानी योजनाओं को नए नाम देकर प्रचारित किया जाता है और जनता को भ्रमित किया जाता है कि नई योजनाएँ शुरू की गई हैं। इसके साथ ही विज्ञापन और ब्रांडिंग पर भारी सरकारी खर्च का प्रश्न भी उठाया जाता है। विपक्ष यह भी मानता है कि सरकार भारतीय लोकतंत्र की मूल आत्मा विकेंद्रीकरण को खत्म प्रयास कर रही है तथा व्यक्तिवाद को बढ़ावा दे रही है। इसके अतिरिक्त 'प्रधानमंत्री-केंद्रित' नामकरण को संघीय ढांचे के विरुद्ध बताया जा रहा है क्योंकि योजनाओं के क्रियान्वयन में राज्यों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

यदि एक तुलनात्मक विश्लेषण 'नाम बनाम परिणाम' के आधार पर किया जाए और निष्पक्ष देखा जाए तो दोनों ही पक्षों में कुछ सच्चाई है। यह भी सच है कि कई योजनाओं में केवल नाम बदला गया, जबकि ढांचा लगभग वही रहा। वहीं यह भी तथ्य है कि कुछ योजनाओं में वास्तविक सुधार, बजट वृद्धि और दायरा विस्तार किया गया।

दरअसल समस्या तब पैदा होती है जब नाम परिवर्तन को ही उपलब्धि के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। यथार्थ और सत्य तो यही है कि विभिन्न योजनाओं का मूल्यांकन उनके नाम नहीं, परिणाम से होना चाहिए ।

अस्तु, कहा जा सकता है कि सरकारी योजनाओं का नाम बदलना न तो पूर्णतः गलत है और न ही पूर्णतः सही। यदि नाम परिवर्तन के साथ नीति में स्पष्ट सुधार, पारदर्शिता और परिणाम दिखाई दें, तो इसे सकारात्मक कदम माना जाना चाहिए किंतु यदि यह केवल राजनीतिक पहचान और श्रेय लेने का माध्यम बन जाए तो यह लोकतांत्रिक संसाधनों का दुरुपयोग है।

भारत जैसे देश में आवश्यकता इस बात की है कि सरकारें नीति की निरंतरता बनाए रखें। योजनाएँ किसी सरकार या व्यक्ति की नहीं, बल्कि जनता की होती हैं। नाम चाहे जो हो, असली सवाल यह है कि क्या योजना गरीब, किसान, श्रमिक, महिला और बच्चे के जीवन में वास्तविक बदलाव ला रही है ?

एक तरह से कहा जा सकता है कि सरकारी योजनाओं के नाम बदलने की राजनीति दरअसल भारतीय लोकतंत्र की परिपक्वता की परीक्षा है। यदि हम नामों से आगे बढ़कर परिणामों पर चर्चा करें, तो नीति विमर्श अधिक सार्थक होगा। सरकारें बदलेंगी, नाम भी बदल सकते हैं, यदि उद्देश्य जनकल्याण है तो उसे राजनीति से ऊपर रखा जाना चाहिए और यदि नाम केवल राजनीतिक विचारधारा को पुष्ट करने के लिए बदला जा रहा है तो फिर इसका विरोध भी जायज है।

गोवा नाइट क्लब अग्निकांड

जन्नत में जहन्नुम की वो काली रात

● पूनम प्रकाश / शिंकी पांडेय

गोवा, जिसे भारत का 'पार्टी कैपिटल' कहा जाता है, जहां हर साल लाखों पर्यटक सुकून और जश्न के लिए आते हैं, हाल ही में एक ऐसी त्रासदी का गवाह बना जिसने पूरे देश को झकझोर कर रख दिया। 6 दिसंबर 2025 की देर रात, अरपोरा स्थित 'बर्च बाय रोमियो लेन' नाइट क्लब में लगी भीषण आग ने न केवल 25 जिंदगियां निगल लीं, बल्कि गोवा की नाइटलाइफ और पर्यटन उद्योग की सुरक्षा व्यवस्था पर गंभीर सवाल खड़े कर दिए। यह घटना महज एक हादसा नहीं, बल्कि लापरवाही, लालच और नियमों की अनदेखी का एक भयावह परिणाम है।

सुरक्षा में चूकः मौत का जाल

इस हादसे की जांच में जो तथ्य सामने आए हैं, वे बेहद चौंकाने वाले और क्रोधित करने वाले हैं। यह स्पष्ट है कि यह क्लब सुरक्षा मानकों की धज्जियां उड़ाते हुए चल रहा था।

- इमरजेंसी एग्जिट का अभावः

सबसे बड़ी लापरवाही यह थी कि क्लब के बेसमेंट और ग्राउंड फ्लोर पर कोई उचित आपातकालीन निकास द्वार नहीं था। जब आग लगी, तो लोग मुख्य द्वार की ओर भागे, जो पहले से ही भीड़ से भरा था। कई लोग, विशेषकर किचन स्टाफ और बेसमेंट में मौजूद मेहमान, धुएं और आग के बीच फंस गए क्योंकि उनके पास भागने का कोई दूसरा रास्ता नहीं था।

- ज्वलनशील सामग्रीः

क्लब का इंटीरियर लकड़ी, कपड़े और फोम से बना था, जिसने आग को तेजी से भड़काया।

- अवैध निर्माणः

वह काली रातः क्या हुआ था उस दिन ?

6 दिसंबर की रात हमेशा की तरह रंगीन थी। वीकेंड का माहौल था और 'बर्च बाय रोमियो लेन' क्लब खचाखच भरा हुआ था। प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार, क्लब में करीब 100 से 150 लोग मौजूद थे, जिनमें पर्यटक और स्टाफ शामिल थे। रात के करीब 11:45 बजे, जब जश्न अपने शबाब पर था, तभी अचानक एक चिंगारी ने विकराल रूप ले लिया।

रिपोर्ट्स के मुताबिक, आग लगने का मुख्य कारण क्लब के अंदर चल रहा एक 'फायर शो' या 'इलेक्ट्रिक फायरक्रैकर्स' का इस्तेमाल बताया जा रहा है। जैसे ही आतिशबाजी शुरू हुई, एक चिंगारी क्लब की लकड़ी की छत और सजावट के ज्वलनशील सामान पर जा गिरी। देखते ही देखते, पूरा क्लब आग के गोले में तब्दील हो गया।

संगीत का शोर चीख-पुकार में बदल गया। आग इतनी तेजी से फैली कि लोगों को संभलने का मौका ही नहीं मिला। क्लब के अंदर धुएं का गुबार भर गया, जिससे दृश्यता शून्य हो गई। भगदड़ मच गई, लेकिन बाहर निकलने के रास्ते इतने संकरे और सीमित थे कि कई लोग अंदर ही फंस गए।

जांच में पता चला है कि क्लब का एक बड़ा हिस्सा अवैध रूप से बनाया गया था। इसके बावजूद, स्थानीय प्रशासन की नाक के नीचे यह धड़ल्ले से चल रहा था।

- फायर सेफ्टी उपकरणों की कमी:

आग बुझाने के लिए पर्याप्त उपकरण या स्प्रिंकलर सिस्टम या तो नदारद थे या काम नहीं कर रहे थे।

जान बचाने की जद्दोजहद और पीड़ितों का दर्द

इस हादसे में 25 लोगों की दर्दनाक मौत हुई। मरने वालों में ज्यादातर लोगों की जान जलने से नहीं, बल्कि दम घुटने से गई। जब आग लगी, तो बेसमेंट और किचन क्षेत्र 'गैस चैंबर' बन गए।

इस त्रासदी की मानवीय कहानियां दिल दहला देने वाली हैं। एक रिपोर्ट के अनुसार, असम का एक युवक, राहुल तांती, उस रात अपनी 'पहली नाइट ड्यूटी' पर था। वह अपने नवजात बच्चे और परिवार के बेहतर भविष्य के लिए गोवा कमाने आया था, लेकिन किस्मत को कुछ और ही मंजूर था। इसी तरह, कई पर्यटक जो गोवा छुट्टियां मनाने आए थे, वे अपने घरों को ताबूत में लौटे।

अस्पतालों के बाहर परिजनों का रो-रोकर बुरा हाल था। किसी ने अपना बेटा खोया, किसी ने अपनी पत्नी, तो किसी ने अपना एकमात्र सहारा। यह दर्द सिर्फ उन परिवारों का नहीं, बल्कि पूरे समाज का है जो सुरक्षा की झूठी तसल्ली पर जी रहा था।

मालिकों की बेरुखी और कानूनी शिकंजा

हादसे के बाद क्लब के मालिकों, सौरभ लूथरा और गौरव लूथरा, का रवैया अमानवीयता की हदें पार कर गया। रिपोर्ट्स के मुताबिक, जब क्लब जल रहा था और लोग अपनी जान बचाने के लिए तड़प रहे थे, तब ये दोनों भाई राहत कार्य में मदद करने के बजाय देश छोड़कर भागने की योजना बना रहे थे।

पुलिस जांच में पता चला कि आग लगने के कुछ ही देर बाद, रात के करीब 1:17 बजे, उन्होंने थाईलैंड (बैंकाक) के लिए फ्लाइट टिकट बुक कर ली और सुबह होते-होते देश से फरार हो गए। हालांकि, भारतीय कानून के हाथ लंबे साबित हुए। भारत सरकार ने तुरंत उनके पासपोर्ट रद्द किए और इंटरपोल के माध्यम से 'ब्लू कॉर्नर नोटिस' जारी किया। थाईलैंड पुलिस ने उन्हें फुकेत में गिरफ्तार किया और 16 दिसंबर को उन्हें भारत डिपोर्ट कर दिया गया।

फिलहाल, पुलिस ने लूथरा बंधुओं के अलावा क्लब के मैनेजर और अन्य स्टाफ को भी गिरफ्तार किया है। उन पर 'गैर-इरादतन हत्या' और सुरक्षा नियमों के उल्लंघन के गंभीर आरोप लगाए गए हैं।

भविष्य के लिए सबक

यह त्रासदी हमारे लिए एक चेतावनी है। अब समय आ गया है कि हम 'चलता है' वाले रवैये को छोड़ें। भविष्य में ऐसी घटनाओं को रोकने के लिए कुछ ठोस कदम उठाने होंगे:

सख्त ऑडिट : - सभी सार्वजनिक स्थलों, विशेषकर नाइट क्लबों और होटलों का नियमित और पारदर्शी 'फायर सेफ्टी ऑडिट' होना चाहिए।

जीरो टॉलरेंस: - सुरक्षा नियमों के उल्लंघन पर तुरंत लाइसेंस रद्द और भारी जुमार्ना होना चाहिए। राजनीतिक रसूख या पैसों के बल पर किसी को बख्शा नहीं जाना चाहिए।

भीड़ नियंत्रण:- हर जगह की एक क्षमता निर्धारित होनी चाहिए और उससे अधिक लोगों के प्रवेश पर रोक लगनी चाहिए।

जागरूकता: - पर्यटकों और स्टाफ को आपातकालीन स्थिति से निपटने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। एग्जिट गेट्स पर स्पष्ट संकेत होने चाहिए।

जवाबदेही: - सिर्फ मालिकों पर नहीं, बल्कि उन सरकारी अधिकारियों पर भी कार्रवाई होनी चाहिए जिन्होंने अवैध निर्माण और सुरक्षा खामियों की अनदेखी की।

प्रशासन की नींद और कार्रवाई

हमेशा की तरह, प्रशासन की नींद हादसे के बाद टूटी। गोवा सरकार और मुख्यमंत्री प्रमोद सावंत ने घटना की उच्चस्तरीय जांच के आदेश दिए हैं।

मुआवजा: - मृतकों के परिजनों को 5 लाख रुपये और घायलों को 50,000 रुपये के मुआवजे की घोषणा की गई है।

सीलिंग अभियान: - हादसे के तुरंत बाद, प्रशासन ने पूरे गोवा में नाइट क्लबों और रेस्तरां की जांच शुरू कर दी है। सुरक्षा मानकों का पालन न करने वाले कई लोकप्रिय स्थानों (जैसे 'द केप गोवा') को सील कर दिया गया है।

प्रतिबंध: - नॉर्थ गोवा प्रशासन ने नाइट क्लबों और होटलों के अंदर किसी भी तरह की आतिशबाजी या फायर शो पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया है।

हालांकि, सवाल यह उठता है कि क्या प्रशासन को ऐसी कार्रवाई के लिए 25 लोगों की मौत का इंतजार करना जरूरी था? अवैध निर्माण और सुरक्षा उल्लंघनों की शिकायतें अक्सर आती रहती हैं, लेकिन भ्रष्टाचार और मिलीभगत के कारण उन पर कभी सख्त कार्रवाई नहीं होती।

पर्यटन पर असर और उठते सवाल

गोवा की अर्थव्यवस्था पूरी तरह पर्यटन पर निर्भर है। इस घटना ने पर्यटकों के मन में डर पैदा कर दिया है। सोशल मीडिया पर लोग गोवा की सुरक्षा व्यवस्था पर सवाल उठा रहे हैं। क्या गोवा सिर्फ शराब और पार्टी के लिए है, या वहां पर्यटकों की जान की भी कोई कीमत है?

विपक्षी दलों और स्थानीय नागरिकों ने सरकार पर आरोप लगाया है कि 'ईज ऑफ डूइंग बिजनेस' के नाम पर सुरक्षा नियमों के साथ समझौता किया जा रहा है। यह घटना इस बात का प्रमाण है कि मुनाफा कमाने की होड़ में मानवीय जीवन को दांव पर लगाया गया।

अरपोरा नाइट क्लब अग्निकांड एक ऐसा घाव है जिसे भरने में लंबा वक्त लगेगा। उन 25 लोगों की जान तो वापस नहीं आ सकती, लेकिन उन्हें सच्चा न्याय तभी मिलेगा जब हम यह सुनिश्चित करें कि भविष्य में फिर किसी 'राहुल' या किसी पर्यटक को लापरवाही की आग में अपनी जान न गंवानी पड़े।

गोवा को अपनी चमक-दमक के साथ-साथ अपनी 'आत्मा' को भी सुरक्षित रखना होगा। यह घटना याद दिलाती है कि जीवन का मूल्य किसी भी मुनाफे या पार्टी से कहीं अधिक है। अब वक्त शोक मनाने के साथ-साथ संकल्प लेने का भी है—एक सुरक्षित और जिम्मेदार पर्यटन का संकल्प।

ट्रांसजेंडर की पहचान और अधिकार

कंडक्टर का जवाब सिस्टम आधारित था–मशीन में जैसा विकल्प है, वैसा ही टिकट दिया जा सकता है। लेकिन यह प्रशासनिक तर्क उस सामाजिक वास्तविकता को नहीं समझता जिसमें ट्रांसजेंडर समुदाय वर्षों से अपनी पहचान, सम्मान और समान अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहा है।

● बाबूलाल नागा

भारतीय समाज विविधताओं से भरा हुआ है लेकिन इस विविधता के बीच कुछ समुदाय ऐसे भी हैं जिन्हें लंबे समय से उपेक्षा, भेदभाव और सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ा है। ट्रांसजेंडर समुदाय उन्हीं में से एक है। यद्यपि सुप्रीम कोर्ट और संविधान ने इस समुदाय को समान गरिमा और अधिकार दिए हैं, फिर भी व्यवहारिक जीवन में इन अधिकारों के क्रियान्यवन में कई बाधाएं नजर आती हैं। हाल ही में राजस्थान में रोडवेज बस टिकट श्रेणी को लेकर उठा एक विवाद इसी विफलता की ओर संकेत करता है।

11 दिसंबर को जयपुर से जोधपुर जा रही राजस्थान रोडवेज बस में यात्रा कर रहीं ट्रांसजेंडर वकील रवीना सिंह को टिकट बनवाते समय यह महसूस हुआ कि इलेक्ट्रॉनिक टिकट मशीन में केवल दो विकल्प ₹पुरुष₹ और ₹महिला₹ उपलब्ध हैं। उनकी पहचान इनमें से किसी के अंतर्गत नहीं आती, इसलिए उन्होंने आपत्ति जताई। उनका सवाल सीधा था–₹जब मेरी अपनी लैंगिक पहचान है, तो टिकट में मुझे क्यों महिला या पुरुष के रूप में चिन्हित किया जाए?₹ ट्रांसजेंडर के लिए कोई अलग विकल्प मशीन में नहीं था। कंडक्टर का जवाब सिस्टम आधारित था–मशीन में जैसा विकल्प है, वैसा ही टिकट दिया जा सकता है। लेकिन यह प्रशासनिक तर्क उस सामाजिक वास्तविकता को नहीं समझता जिसमें ट्रांसजेंडर समुदाय वर्षों से अपनी पहचान, सम्मान और समान अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहा है।

यह विवाद केवल एक क्षणिक घटना नहीं था बल्कि यह हमारे समाज और सरकारी व्यवस्थाओं में मौजूद उन गहरी खामियों को उजागर करता है जो लैंगिक विविधता को अब भी स्वीकार करने में पीछे हैं। बस टिकट जैसी बुनियादी सुविधा में भी यदि 'पुरुष' और 'महिला' के अलावा कोई विकल्प नहीं मिलता, तो यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि ट्रांसजेंडर की पहचान का सम्मान कहां है? सरकारी फॉर्म, पहचान पत्र, अस्पताल रजिस्टर, नौकरी आवेदन–कई स्थान आज भी ऐसे हैं जहां तीसरे लिंग

के लिए जगह मौजूद नहीं है। इस मामले ने यह भी दिखाया कि पहचान का सवाल किसी भी व्यक्ति के लिए कितना मूलभूत और संवेदनशील होता है। यह विवाद राजस्थान में सार्वजनिक परिवहन सेवाओं में ट्रांसजेंडर लोगों के अधिकारों और पहचान से जुड़ी स्पष्टता की कमी को भी उजागर करता है। हालांकि भारतीय रेल जैसी अन्य सरकारी सेवाओं में ट्रांसजेंडर के लिए अलग तीसरा जेंडर विकल्प पहले से मौजूद है, लेकिन राजस्थान रोडवेज में अभाव है।

भारत में ट्रांसजेंडर समुदाय लंबे समय से सामाजिक उपेक्षा और संवैधानिक अधिकारों के बीच फंसा हुआ है। 2014 में सुप्रीम कोर्ट के ऐतिहासिक नालसा निर्णय ने ट्रांसजेंडर को स्वतंत्र तीसरे लिंग के रूप में मान्यता दी और कहा कि–'लैंगिक पहचान व्यक्ति की आत्म-पहचान का मूल अधिकार है। इसे सम्मान देना राज्य का अनिवार्य कर्तव्य है।' इस फैसले ने स्पष्ट कर दिया कि किसी व्यक्ति का लिंग उसके जन्म प्रमाण या सामाजिक अपेक्षाओं से तय नहीं होता, बल्कि उसकी आंतरिक पहचान से निर्धारित होता है। इसके बाद भारत सरकार ने 2019 में ट्रांसजेंडर व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम पारित किया। यह अधिनियमः ट्रांसजेंडर की स्व-पहचान को मान्यता देता है, भेदभाव पर कानूनी प्रतिबंध लगाता है, शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार में समान अवसर सुनिश्चित करने का आदेश देता है, सरकारी सेवाओं में समावेशी नीतियों की मांग करता है लेकिन वास्तविकता यह है कि– सरकारी फॉर्म, बसझट्रेन टिकट, शौचालय, स्कूल रजिस्टर, हॉस्पिटल रिकॉर्ड, नौकरी के आवेदन अधिकांश जगह अभी भी ₹पुरुष₹ और ₹महिला₹ से आगे नहीं बढ़ पाते। यह कानूनी संरचना और जमीनी व्यवस्था में अंतर को उजागर करता है।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 14 (समानता), 15 (भेदभाव से सुरक्षा), 19(1)(ं) (अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता) और 21 (जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता) सभी नागरिकों की गरिमा की रक्षा करते हैं। ट्रांसजेंडर भी इसी नागरिक ढांचे का अविभाज्य हिस्सा हैं। फिर भी, उन्हें रोजमर्रा के जीवन में बार-बार अपमान, उपहास, सेवा से इनकार, और भेदभाव का सामना करना पड़ता है– चाहे वह सार्वजनिक स्थान हो, स्कूलझकॉलेज, बसें, अस्पताल, नौकरी या किराये का घर। राजस्थान रोडवेज टिकट विवाद दशार्ता है कि यदि टिकट खरीदने जैसे साधारण अधिकार में भी लिंग पहचान की जगह केवल 'पुरुष/महिला' विकल्प ही हों तो ट्रांसजेंडर व्यक्ति स्वयं को कहां रखें? यह केवल प्रशासनिक कमी नहीं, बल्कि गरिमा पर चोट है। ट्रांसजेंडर समुदाय की पहचान केवल एक बस टिकट देने का विषय नहीं, बल्कि उनके अस्तित्व का सम्मान है। एक संकेत है–कि देश को अभी इस दिशा में काफी लंबा सफर तय करना है। अधिकारों का वास्तविक अर्थ तभी पूर्ण होगा, जब हर ट्रांसजेंडर व्यक्ति को बिना किसी भेदभाव के वही गरिमा मिले जो संविधान सभी को प्रदान करता है।

सवाल यह है कि इतने स्पष्ट कानून और न्यायिक निदेर्शों के बावजूद प्रशासनिक व्यवस्थाएं बदल क्यों नहीं पातीं? इसका उत्तर शायद हमारे समाज की मानसिकता और सरकारी तंत्र में संवेदनशीलता की कमी में छिपा है ट्रांसजेंडर व्यक्ति आज भी उपहास, तिरस्कार और अनदेखी का सबसे आसान निशाना बनते हैं। इससे उनके अधिकारों की उपलब्धता तो बाधित होती ही है, गरिमा पर भी आघात होता है।

जरूरत इस बात की है कि सरकारी विभाग, परिवहन निगम, स्वास्थ्य संस्थान और शिक्षण संस्थाएं अपनी प्रणालियों में स्पष्ट और अनिवार्य रूप से तीसरे लिंग की श्रेणी को शामिल करें। सामाजिक न्याय की दिशा में कुछ जरूरी कदम उठाने की जरूरत है। जैसे-सभी सरकारीझगैरसरकारी फॉर्म और सेवाओं में 'अन्य/ट्रांसजेंडर' श्रेणी अनिवार्य है, यह सिर्फ डेटा की बात नहीं, अस्तित्व की मान्यता है। प्रशासनिक और परिवहन सेवाओं में संवेदनशीलता प्रशिक्षण- बस कंडक्टर, पुलिस, अस्पताल कर्मचारी-सभी को लिंग विविधता पर प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। गरिमा का वातावरण- ट्रांसजेंडर को 'मजाक', 'तमाशा' या 'डर' का विषय समझना बंद करना होगा। उनके साथ सम्मान से बात करना, समान व्यवहार करना ही सामाजिक परिपक्वता की पहचान है। स्कूल पाठ्यक्रमों में लैंगिक विविधता पर अध्याय जोड़ने से समाज में समझ की नींव मजबूत होगी। स्थानीय निकायों और राज्यों की जवाबदेही तय हो। यदि बस टिकट, शौचालय या सरकारी योजनाओं में ट्रांसजेंडर श्रेणी नहीं है तो यह सीधा अधिकारों का उल्लंघन है और इसे तुरंत सुधारा जाना चाहिए।

बहरहाल, समानता केवल शब्द नहीं, व्यवहार भी होना चाहिए. ट्रांसजेंडर व्यक्ति भिक्षा, ताली और हाशिए के जीवन तक सीमित नहीं हैं– वे शिक्षक, वकील, कलाकार, अधिकारी, कर्मचारी–सभी कुछ हो सकते हैं और बन रहे हैं लेकिन जब समाज और राज्य पहचान और गरिमा को ही स्वीकार नहीं करते, तो अधिकार अधूरे रह जाते हैं। अतः समाज को भी यह समझना होगा कि ट्रांसजेंडर व्यक्ति किसी 'अन्य' श्रेणी नहीं, बल्कि इसी समाज के समान अधिकार-युक्त नागरिक हैं।

ऑस्ट्रेलिया में आतंकियों ने किया नरसंहार

पवित्र कुरान की नजरों से सही नहीं ठहराया जा सकता

हमलावर, नवीद अकरम ने सिडनी में सेंट्रल क्वींसलैंड यूनिवर्सिटी और इस्लामाबाद में हैमदर्द यूनिवर्सिटी में पढ़ाई की थी। उसने अल-मुराद इंस्टीट्यूट में भी पढ़ाई की जहां उसे एक आदर्श छात्र बताया गया था। द सिडनी मॉर्निंग हेराल्ड ने बताया है कि उसने हाल ही में अपनी नौकरी खो दी थी।

● गौतम चौधरी

अभी हाल ही की बात है। ऑस्ट्रेलिया स्थित सिडनी के एक समुद्री किनारे पर यहूदी समुदाय के लोग शांतिपूर्ण तरीके से अपना त्योहार मना रहे थे, उसी बीच दो आतंकवादियों ने उन पर हमला कर दिया। इस घटना में कम से कम 12 लोगों की जान चली गयी। इस घटना को एक बार फिर से इस्लाम के साथ जोड़ा जा रहा है। कुछ मौकापरस्त लोग इसे इस्लामिक आतंकवाद की भी संज्ञा देने लगे हैं लेकिन वे इस बात को नजरअंदाज कर रहे हैं कि जब दो सिरफिरे अंधाधुंध गोलिया बरसा रहे थे, ठीक उसी वक्त एक निहत्था व्यक्ति आतंकवादियों से भिड़ गया और उसकी बंदूक छीन ली। अगर वह शख्स आतंकवादियों से नहीं जूझता तो और कई लोग मारे जाते। एक मीडिया रिपोर्ट में दावा किया गया है कि उस शख्स का नाम अहमद अल-अहमद है। अहमद भी अरबी मूल का है और वह फल बेचने का व्यवसाय करता है। 43 साल के अहमद के दो बच्चे हैं और वह भी मुसलमान है। अब इस घटना को इस्लामिक आतंकवाद कहना कितना जायज होगा?

आइए, इस पूरे मामले को कुरान के नजरिये से देखते हैं। "कुरान 262, 569, 2112 और 3113-115 से यह बिल्कुल साफ हो जाता है कि अल्लाह किसी खास धार्मिक समूह का पक्ष नहीं लेता। वह हर उस इंसान से प्यार करता है जो अल्लाह पर विश्वास करता है, आखिरत को मानता है और अच्छे काम करता है।' इसी तरह, "सूरह यूनुस, आयत 32 की व्याख्या कभी किसी मुस्लिम विद्वान ने उस तरह से नहीं दी। इसका प्रैक्टिकल प्रदर्शन और व्याख्या फ्रांस के एक ईसाई डॉक्टर, डॉ. मौरिस ने 1975 में किया था । इसी तरह, सूरह फुस्सिलात, आयत 53 की व्याख्या भी वैज्ञानिकों ने दी थी। पवित्र ग्रंथ कुरान सिर्फ.मुस्लिम समुदाय के लिए नहीं गया है । यह पूरी इंसानियत के लिए एक यूनिवर्सल और हमेशा रहने वाला मार्गदर्शन है लेकिन मुसलमानों के कुछ ठेकेदारों ने इसे सीमाओं में बांध दिया। जब लोग इस पर ज्यादा सोचते हैं तो वे कुरान से इस्लामी राजनीतिक शासन साबित करने की कोशिश करने लगते हैं। यह गलत है। कुरान तो मानवता के उन्नयन की पवित्र किताब है। अगर ये आयतें नहीं होतीं, तो कुरान इस धरती पर रहने वाले हर इंसान के लिए मार्गदर्शन का जरिया नहीं रहता। पवित्र ग्रंथ के इतने साफ मार्गदर्शन के बावजूद, कुछ सिरफिरे लोगों ने खुद को हिंदू, मुस्लिम, ईसाई और यहूदी जैसे ग्रुप में बाँट लिया और ऐसा करके उन्होंने खुद को बनाने वाले का असली इरादा खो दिया।

बरेलवी फिरके के मुफ्ती मौलाना तुफैल खान कादिरी साहब फरमाते हैं, "पवित्र कुरान में कई ऐसी

आयते नाजिल हुई है जिसमें मानवता की रक्षा का संकल्प दोहराया गया है। एक आयत तो साफ संदेश देता है कि जिसने निर्दोष की हत्या की, मानों उससे पूरी मानवता का कत्ल कर दिया और जिसने किसी निर्दोष की रक्षा की, मानों उसने पूरी मानवता की रक्षा की हो।" कादिरी साहब कहते हैं कि "ऑस्ट्रेलिया में हुए यहूदियों पर हमले को यदि कुरान की नजरों से देखें तो यह निहायत नाजायज है। इससे मुसलमानों का कोई सरोकार नहीं है जबकि अहमद अल-अहमद न केवल मानवता का नायक है अपितु इस्लाम का भी गाजी है। अहमद अल-अहमद असल में धर्म का रक्षक और इस्लाम का सच्चा सिपाही है। इस्लाम हमें यही सिखाता है।"

ऑस्ट्रेलिया के सिडनी में बीते रविवार शाम को अंधाधुंध फायरिंग में 12 लोगों की जानें गई। एक मीडिया रिपोर्ट में दावा किया जा रहा है कि यहूदी ऑस्ट्रेलियाई लोगों को निशाना बनाकर हमला करने वाले दो में से एक का संबंध पाकिस्तान से है। दो हमलावरों में से एक मारा गया है जबकि एक को घायल हालत में गिरफ्तार किया गया है। कुछ मीडिया रिपोर्ट में यह भी दावा किया गया है कि दोनों हमलावर पिता-पुत्र हैं। सूत्रों के अनुसार, जांचकताओं ने संदिग्ध की पहचान न्यू साउथ वेल्स की अल-मुराद इंस्टीट्यूट के छात्र के रूप में की है। यह संस्थान अरबी और कुरान की शिक्षा देता है। जांच अधिकारी उसकी शैक्षिक और सामाजिक पृष्ठभूमि की जांच कर रहे हैं। फिलहाल उसके संस्थान का आतंकी हमले से कोई संबंध नहीं मिला है। हमलावर, नवीद अकरम ने सिडनी में सेंट्रल क्वींसलैंड यूनिवर्सिटी और इस्लामाबाद में हैमदर्द यूनिवर्सिटी में पढ़ाई की थी। उसने अल-मुराद इंस्टीट्यूट में भी पढ़ाई की जहां उसे एक आदर्श छात्र बताया गया था। द सिडनी मॉर्निंग हेराल्ड ने बताया है कि उसने हाल ही में अपनी नौकरी खो दी थी।

मीडिया रिपोर्ट और दावों पर ध्यान दें तो हमलावर निःसंदेह मुसलमान है। उसने मुस्लिम शिक्षा भी ग्रहण कर रखी थी। इस्लाम के पवित्र ग्रंथ कुरान की पढ़ाई कर चुका था लेकिन आतंकवादियों से बिना किसी हथियार के भिड़ने वाले शख्स की कोई धार्मिक पृष्ठभूमि सामने नहीं आई है । उसका नाम अरबी है इसलिए लोगों का मानना है कि वह भी मुसलमान ही है। इस घटना ने साफ कर दिया है कि कुछ ऐसी संस्थाएं हैं, जो धार्मिक पुस्तकों की व्याख्या निजी हितों के लिए कर रहे हैं। इस्लामिक विद्वानों और समझदार संस्थाओं को इसपर गंभीरता से विचार करना चाहिए। इजरायल में हो रही घटना, या फिर फिलिस्तीनियों के साथ हो रहे अन्याय को यहूदियों पर आक्रमण कर बदला लेना इसे किसी कीमत पर जायज नहीं ठहराया जा सकता है। यह न तो मानवता के लिए ठीक है और न ही इस्लाम इसकी इजाजत देता है। इससे इस्लाम का भला नहीं होगा। उलट इस्लाम के खिलाफ जो षड्यंत्र चल रहे है, उसे बल मिलेगा।

इस प्रकार के सिरफिरे लोग भारत में भी हैं। हमारा देश लगातार इस प्रकार के आतंकवाद से जूझ रहा है। इसका एक वैश्विक रूप तैयार हो गया है। इस प्रकार के मानस को तैयार करने में कौन लोग जिम्मेदार हैं, उस पर सत्ता और शासन से ज्यादा मुसलमानों को नजर रखने की जरूरत है। इधर के दिनों में अरब के कई मुस्लिम देश अपने आप को बदलने लगे हैं, जबकि पाकिस्तान और बांग्लादेश जैसे इस्लामिक राष्ट्र नकारात्मक मानसिकता को लगातार हवा दे रहा है। संयुक्त राज्य अमेरिका का वर्तमान नेतृत्व भी फिलहाल इसी दिशा में काम कर रहा है। इसे संभालने की जरूरत है और ईमान वाले इसे बेहतर समझ समझ सकते हैं।

नए लेबर कोड

सुधार या खतरे की घंटी

● राजेश जैन

भारत के श्रम बाजार में आजादी के बाद का सबसे बड़ा कानूनी बदलाव चुपचाप लागू कर दिया गया है। चार नए लेबर कोड–जिन्हें सरकार ऐतिहासिक सुधार बता रही है-देश के करोड़ों कामगारों की रोजमर्रा की ज़िंदगी को सीधे प्रभावित करेंगे। उद्योग जगत इसे आधुनिक अर्थव्यवस्था की जरूरत मानता है लेकिन मजदूर संगठनों के लिए यह अधिकारों के क्षरण की शुरूआत है। असल सवाल यही है कि ये बदलाव रोजगार को सुरक्षित बनाएंगे या असुरक्षा को कानूनी जामा पहनाएंगे। क्या भारत स्थायी नौकरियों की अवधारणा से विदा लेकर कॉन्ट्रैक्ट और गिग इकॉनॉमी की ओर निर्णायक मोड़ ले चुका है?

सरकार का दावा है कि नए लेबर कोड से उद्योगों को लचीलापन मिलेगा, निवेश बढ़ेगा और 'ईज ऑफ डूइंग बिजनेस' सुधरेगा। लेकिन किसी भी सुधार की असली परीक्षा यह होती है कि वह सबसे कमजोर तबके के लिए क्या बदलता है। अगर विकास की कीमत नौकरी की स्थिरता, कामगार की आवाज और सामाजिक सुरक्षा है, तो यह सुधार नहीं, चेतावनी की घंटी है। सवाल यह नहीं है कि बाजार कितना आजाद होगा. सवाल यह है कि काम करने वाले कितना सुरक्षित रहेंगे।

44 कानूनों से 4 कोडः सरलता या नियंत्रण

सरकार ने 44 पुराने श्रम कानूनों को समेटकर चार कोड बनाए हैं–कोड ऑन वेजेज, कोड ऑन सोशल सिक्योरिटी, इंडस्ट्रियल रिलेशंस कोड और ऑक्युपेशनल सेफ्टी, हेल्थ एंड वर्किंग कंडीशंस कोड। वेजेज कोड 2019 में पारित हुआ जबकि शेष तीनों कोड 2020 में संसद से मंजूरी पा चुके थे। इसके बाद लंबे समय तक इन पर अमल नहीं हुआ जिससे यह धारणा बनी कि इन्हें ठंडे बस्ते में डाल दिया गया है। 2024 में सरकार का दूसरा कार्यकाल समाप्त हो गया और तीसरे कार्यकाल के शुरूआती महीनों में भी इन पर कोई सार्वजनिक चर्चा नहीं हुई। ऐसे में अचानक इन श्रम संहिताओं को लागू करने की अधिसूचना जारी होना कई सवाल खड़े करता है।

सरकार का तर्क है कि पुराने कानून बिखरे हुए थे और उनमें पारदर्शिता की कमी थी, इसलिए एक सरल और एकीकृत ढांचा बनाया गया। यह भी कहा गया कि ये कोड कर्मचारियों और मजदूरों के हित में हैं और श्रम सुधारों की दिशा में एक प्रगतिशील कदम हैं लेकिन यह नहीं बताया गया कि पिछले कार्यकाल में इन्हें लागू करने से सरकार को किसने रोका था और अब अचानक इनकी क्या अनिवार्यता पैदा हो गई।

यह भी याद रखना जरूरी है कि इन संहिताओं को जिस समय संसद से पारित कराया गया था, वह कोरोना महामारी का दौर था। नोटबंदी के बाद पहले से ही जूझ रही अर्थव्यवस्था पर महामारी ने करारा प्रहार किया। लाखों लोग बेरोजगार हुए, प्रवासी मजदूर सड़कों पर आ गए और देश ने अभूतपूर्व मानवीय संकट देखा। तब सरकार ने 'आत्मनिर्भर भारत' का नारा दिया था। दिलचस्प है कि अब, श्रम संहिताओं को लागू करते समय भी वही नारा दोहराया जा रहा है। लेकिन मजदूर संगठन तब भी इनका विरोध कर रहे थे और आज भी यही कह रहे हैं कि ये संहिताएं मजदूरों से ज्यादा पूंजीपतियों के हितों को साधती हैं।

कागज पर अधिकार, जमीन पर डर

न्यूनतम वेतन की गारंटी, एक साल में ग्रेच्युटी, महिलाओं को समान वेतन, समय पर सैलरी, गिग और प्लेटफॉर्म वर्कर्स की कानूनी पहचान-ये सभी प्रावधान कागज पर सकारात्मक दिखाई देते हैं। लेकिन असली चिंता वहीं से शुरू होती है, जहां नौकरी की स्थिरता, हड़ताल का अधिकार और काम के घंटों का सवाल आता है।

यह समझना जरूरी है कि 'कानून' और 'संहिता' में बुनियादी अंतर होता है। कानून में उल्लंघन पर कड़ी सजा का प्रावधान होता है, जबकि संहिता में अधिकतर मामलों में जुमार्ने तक ही सीमित दंड रखा गया है। इससे अनुपालन की गंभीरता अपने-आप कमजोर पड़ जाती है।

फिक्स्ड टर्म कॉन्ट्रैक्टः स्थायित्व पर चोट

फिक्स्ड टर्म कॉन्ट्रैक्ट (एफटीसी) को लेकर सबसे अधिक विवाद है। इसके तहत कंपनियां स्थायी पदों को भी कॉन्ट्रैक्ट आधारित बना सकती हैं। सरकार का कहना है कि एफटीसी वर्कर को स्थायी कर्मचारी जैसी सुविधाएं मिलेंगी, लेकिन मजदूर संगठनों का तर्क है कि इससे नौकरी की सुरक्षा खत्म हो जाएगी। कॉन्ट्रैक्ट अवधि पूरी होते ही बिना किसी मुआवजे के काम समाप्त किया जा सकेगा।

इसके साथ ही फैक्ट्री बंद करने और छंटनी के लिए कर्मचारियों की सीमा 100 से बढ़ाकर 300 कर दी गई है। इसका मतलब यह है कि देश की लगभग 70झ75 प्रतिशत औद्योगिक इकाइयाँ बिना सरकारी अनुमति कर्मचारियों को निकाल सकती हैं। उद्योग के लिए यह लचीलापन है लेकिन कामगारों के लिए असुरक्षा की एक चौड़ी खाई।

काम के घंटेः कागज पर सीमा, जमीन पर दबाव

कानून कहता है कि कुल काम के घंटे नहीं बढ़ाए जाएंगे लेकिन राज्यों को इसमें छूट दी गई है। कई राज्यों ने 12 घंटे की शिफ्ट और ओवरटाइम की ऊपरी सीमा बढ़ा दी है। यह व्यवस्था नियोक्ताओं के लिए सुविधाजनक हो सकती है, लेकिन मजदूरों के लिए शारीरिक और मानसिक बोझ बढ़ाने वाली है।

हड़तालः अधिकार से अपराध की ओर

इंडस्ट्रियल रिलेशंस कोड की एक और विवादित धारा हड़ताल से जुड़ी है। अब हड़ताल से पहले 60 दिन का नोटिस अनिवार्य होगा। वार्ता, मध्यस्थता और रिफरल प्रक्रिया के दौरान हड़ताल पर रोक रहेगी और उल्लंघन की स्थिति में जुमार्ना और जेल तक का प्रावधान है। पहले ऐसे नियम केवल जरूरी सेवाओं तक सीमित थे, अब इन्हें लगभग सभी क्षेत्रों पर लागू कर दिया गया है। इसका अर्थ यह है कि हड़ताल अब एक संवैधानिक अधिकार से फिसलकर अपराध की श्रेणी में प्रवेश कर रही है।

राज्यों की भूमिकाः एक देश, कई नियम

श्रम समवर्ती सूची का विषय है। कोड केंद्र ने बनाए हैं, लेकिन नियम राज्यों को बनाने हैं। कई राज्यों ने अभी तक पूरी अधिसूचना जारी नहीं की है। इससे देश में एक असमान श्रम ढांचा उभरता दिख रहा है, जहाँ काम के घंटे, सुरक्षा और अधिकार राज्य दर राज्य बदलेंगे।

नए लेबर कोड भारत को ऐसे रोजगार मॉडल की ओर ले जाते दिखते हैं, जहां स्थायी नौकरी धीरे-धीरे अपवाद बनती जाएगी और कॉन्ट्रैक्ट व गिग वर्क सामान्य नियम। पश्चिमी देशों में इस मॉडल ने उत्पादन और मुनाफा तो बढ़ाया, लेकिन सामाजिक अस्थिरता और असमानता भी गहरी की। भारत में इसका असर और गंभीर हो सकता है, क्योंकि यहां पहले से ही अधिकांश कामगार असंगठित हैं और सामाजिक सुरक्षा बेहद सीमित है।

देश ने मजदूर अधिकार किसी दान में नहीं पाए थे. ये दशकों की लड़ाई, हड़तालों और सामूहिक संघर्षों का नतीजा थे। 44 श्रम कानूनों का ढांचा उसी संघर्ष की विरासत था। नए लेबर कोड उस संतुलन को पलटते नजर आते हैं, जहां सुविधा का पलड़ा भारी है और सुरक्षा का हल्का। अब फैसला देश को करना है- क्या हम मजबूत अर्थव्यवस्था सिर्फ.मजबूत कंपनियों के भरोसे खड़ी करना चाहते हैं या मजबूत कामगारों के साथ, जो हर विकास की असली नींव होते हैं। सुधार तभी टिकाऊ होते हैं, जब विकास के साथ न्याय भी चले; वरना इतिहास गवाह है कि असुरक्षा पर खड़ी तरक्की देर तक नहीं टिकती।

सामाजिक सुरक्षाः पहचान है, भरोसा नहीं

गिग और प्लेटफॉर्म वर्कर्स को पहली बार कानूनी परिभाषा दी गई है, यह एक महत्वपूर्ण कदम है लेकिन उनकी सामाजिक सुरक्षा कैसी होगी, फंडिंग कौन करेगा और पात्रता कैसे तय होगी-इन सवालों पर स्पष्टता नहीं है। पहचान मिल गई है, लेकिन सुरक्षा अभी भी धुंध में है।

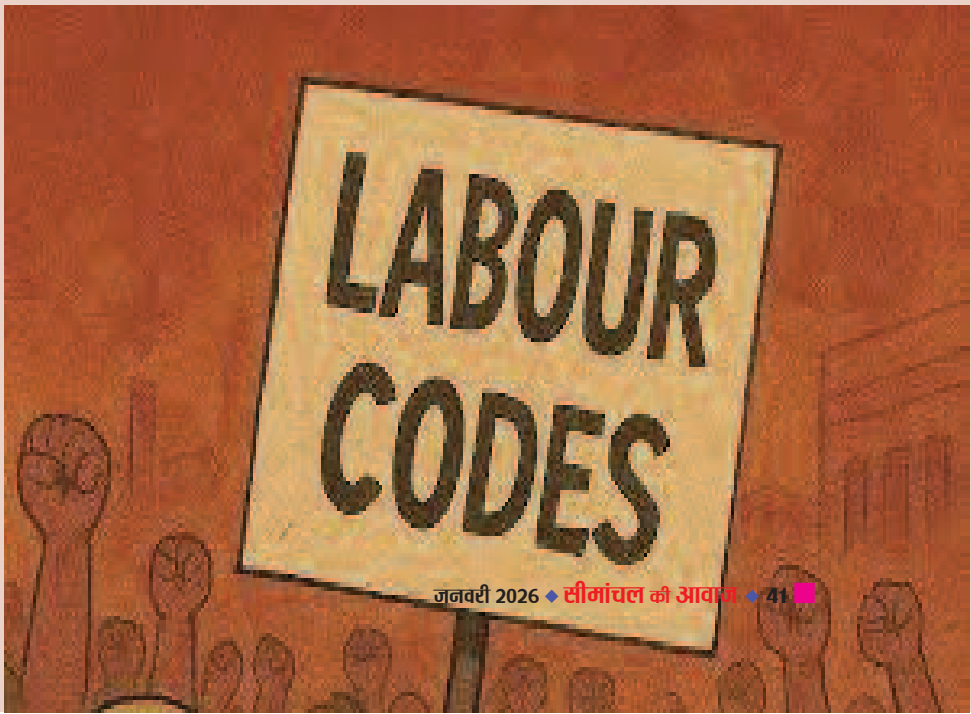

भारतः जनसंहारों से चिंतित दुनिया को प्रेरणा देता एक उजला देश

● **अमरपाल सिंह वर्मा**

मौजूदा दौर में समूची दुनिया में लगातार गहराती हिंसा, युद्ध, जातीय संघर्ष और धार्मिक उन्माद चिंता का विषय बने हुए हैं। कई देशों में आम नागरिक सीधे निशाने पर हैं. कहीं घर उजड़ रहे हैं और कहीं सत्ता के संघर्ष में निर्दोष लोग बलि चढ़ रहे हैं। इस वैश्विक चिंता के दौर में हाल ही में जनसंहार की रोकथाम का जिम्मा संभालने के लिए संयुक्त राष्ट्र में नव नियुक्त सलाहकार चलोका बेयानी ने पूरी दुनिया को आगाह करते हुए कहा कि अनेक देशों में टकरावों और युद्धों के दौरान आम लोगों को जानबूझ कर निशाना बनाए जाने की प्रवृत्ति बढ़ रही है जिससे अत्याचार और गंभीर मानवाधिकार अपराधों का जोखिम तीव्र गति से बढ़ा है। उन्होंने 9 दिसम्बर को जनसंहार के भुक्तभोगियों की समृति व गरिमा और इस अपराध की रोकथाम के अन्तरराष्ट्रीय दिवस के अवसर पर इस बात पर भी भी चिंता जताई है कि अंतरराष्ट्रीय कानूनों के प्रति सम्मान में आ रही गिरावट एक बेहद खतरनाक संकेत है।

बेयानी की यह चेतावनी एक ओर जहां समस्या की गंभीरता को दशार्ने वाली है वही दूसरी ओर पूरी मानवता के सामने संकट को व्यापक रूप में प्रस्तुत करती है लेकिन इसी के साथ यह तथ्य भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि भारत को लेकर विश्व के किसी भी मंच पर इस प्रकार की कोई आशंका व्यक्त नहीं की गई है। इस बात पर हर देशवासी को गर्व होना चाहिए कि समूचा विश्व आज भी भारत को एक ऐसे देश के रूप में देखता है जहां विविध संस्कृतियों, भाषाओं, खान-पान, जाति-धर्मों के बावजूद परस्पर सहयोग, शांति, समन्वय और लोकतांत्रिक संतुलन कायम है।

दुनिया में हमारा देश ही ऐसा है, जहां सैकड़ों भाषाएं, अनेक धर्म, दर्जनों जातियां और अनगिनत सांस्कृतिक धाराएं एक साथ बहती चली आ रही हैं। अनेक विविधताओं के बावजूद हमारा समाज आज भी सह अस्तित्व, भाईचारे और सहयोग की भावना को अपने में समेटे हुए है। हमारे गांवों से लेकर शहरों तक, सबको अलग पहनावा है, अलग बोली है, अपने-अपने त्योहार हैं, अलग खान-पान है फिर भी सब एकजुटता से परिवार, समाज और देश को आगे बढ़ाने में जुटे हुए हैं। इसी मजबूत आधार पर देश खड़ा है और यह संदेश देता प्रतीत होता है कि अगर दृढ़ इच्छा हो तो विविधता को भी सबसे बड़ी ताकत बनाया जा सकता है।

कश्मीरी पंडितों का नरसंहार और पलायन हमारे इतिहास का एक दर्दनाक अध्याय और एक ऐसा धब्बा है जिसे कोई भी संवेदनशील व्यक्ति अनदेखा नहीं कर सकता। उस दौर की पीड़ा आज भी स्मृतियों में जीवित है। इंदिरा गांधी की हत्या के बाद सिखों का कत्लेआम भी हमारे लिए सबसे शर्मनाक और पीड़ादायक अध्यायों में से एक है। वह ऐसा दौर था, जब व्यवस्था की विफलता ने निर्दोष लोगों को असहाय बना दिया। लेकिन आज के प्ररिपेक्ष्य में देखें तो अब देश ऐसे किसी भी संगठित खतरे और वैसी खतरनाक परिस्थितियों से बाहर निकल चुका है। वर्तमान में हमें ऐसी किसी त्रासदी की पुनरावृत्ति का डर नहीं सताता है क्योंकि हमारा सामाजिक और संवैधानिक ढांचा पहले से कहीं अधिक सजग, मजबूत और संतुलित बना है। नफरत के नियंत्रण से बाहर हो जाने पर सर्वाधिक शिकार मानवता ही होती है, कश्मीरी पंडितों और सिखों का कत्लेआम इसके उदाहरण हैं पर इनसे सबक लेते हुए देश ने जहां सबक लिया है बल्कि पहले से कहीं अधिक सतर्क, संवेदनशील और संवैधानिक रूप से मजबूत होकर

खड़ा है। क्या तेजी से बढ़ते भारत में अब ऐसे अंधकारमय दौर को दोहराए जाने की कल्पना भी संभव है?

इस बात को स्वीकारना होगा कि बीते कुछ सालों में देश के कुछ हिस्सों से हिंसा और सामाजिक तनाव की चंद घटनाएं सामने आई हैं। कहीं भीड़ के हाथों किसी की जान गई है, कहीं धार्मिक पहचान को लेकर आंशिक टकराव की स्थिति बनी है, कहीं उत्तेजक बयान देने वालों ने सामाजिक एकता में विष घोलने का प्रयास किया है मगर ऐसी घटनाओं की संख्या, उनका प्रभाव और उनके फैलाव को हम भारत की विशाल जनसंख्या और व्यापक सामाजिक ढांचे के संदर्भ में देखें तो यह कोई बड़ी बात नजर नहीं आती। हां, यह जरूर दुर्भाग्यपूर्ण है कि कुछ ताकतें ऐसे अपवाद स्वरूप मामलों को पूरे देश की छवि खराब करने के लिए उदाहरण के रूप में पेश करने में जुट जाती हैं। सोशल मीडिया, अंतरराष्ट्रीय मंचों और चुनिंदा रिपोर्टों से ऐसा भ्रम फैलाने का प्रयास किया जाता है जैसे देश किसी बड़े मानवीय संकट की ओर बढ़ रहा हो। वे लोग इस वास्तविकता से ध्यान हटाने की कोशिश करते हैं कि देश का हर नागरिक शांतिपूर्ण, सुरक्षित और सम्मानजनक जीवन जी रहा है।

हमारा संविधान इस मामले में देश की ढाल बना हुआ है जो प्रत्येक नागरिक को समान अधिकार, समान सुरक्षा और समान अवसर की गारंटी देता है। देश में स्वतंत्र न्यायपालिका, सक्रिय मीडिया, मजबूत चुनाव प्रणाली और जागरूक समाज ने मिलकर एक ऐसा सुरक्षा कवच बना दिया है, जिसके आगे हर संगठित हिंसा, तानाशाही सोच या जनसंहार जैसी अमानवीय प्रवृत्तियां उभर ही नहीं पा रही हैं। अनेक ऐसे उदाहरण हैं, कोई प्रशासनिक या सामाजिक चूक होने पर न्यायपालिका तत्काल हस्तक्षेप करती है। मीडिया सक्रिय होकर आवाज बुलंद करता है और लोकतांत्रिक संस्थाओं के दबाव समूह सरकार को जवाबदेह बनाते हैं। इसी वजह से हमारा देश जनसंहार जैसी कानूनी परिभाषा वाली प्रत्येक स्थिति से दूर है।

> **कश्मीरी पंडितों का नरसंहार और पलायन हमारे इतिहास का एक दर्दनाक अध्याय और एक ऐसा धब्बा है जिसे कोई भी संवेदनशील व्यक्ति अनदेखा नहीं कर सकता।**

अक्सर जनसंहार से आम लोगों का आशय केवल बड़ी संख्या में लोगों की सामूहिक हत्या ही होता है लेकिन अंतरराष्ट्रीय कानूनों के हिसाब से इसकी परिभाषा कहीं अधिक व्यापक है। अंतरराष्ट्रीय कानूनों के अनुसार किसी राष्ट्रीय, नस्लीय, जातीय या धार्मिक समूह को आंशिक या पूर्ण रूप से नष्ट करने की नीयत से यदि किसी समूह के सदस्यों की हत्या की जाए, उन्हें गंभीर शारीरिक या मानसिक नुकसान पहुंचाया जाए, उन पर ऐसी जीवन परिस्थितियां थोपी जाएं जिनसे उनका भौतिक विनाश हो, समूह में बच्चों के जन्म को रोकने के उपाय किए जाएं या बच्चों को जबरन किसी अन्य समूह में भेज दिया जाए तो ये सभी कृत्य जनसंहार की श्रेणी में आते हैं। इसका साफ मतलब है कि जनसंहार केवल बंदूक, बम या तलवार से नहीं होता, इसे नीतियों, योजनाओं, संगठित उपेक्षा और अमानवीय व्यवस्थाओं के मार्फत भी अंजाम दिया जा सकता है। इस पैमाने हमारा देश आज भी पूरी तरह सुरक्षित श्रेणी में बेदाग खड़ा नजर आता है।

संयुक्त राष्ट सलाहकार बेयानी ने यह भी स्पष्ट किया है कि जब किसी क्षेत्र में इन जोखिमों का स्वरूप लगातार हिंसक होने लगता है, तब उनका कार्यालय चेतावनियां जारी करता है और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर समन्वय स्थापित किया जाता है। इस प्रक्रिया में संयुक्त राष्ट्र के साथ-साथ अफ्रीकी संघ, यूरोपीय संघ जैसे क्षेत्रीय संगठनों और अन्य अंतरराष्ट्रीय प्रणालियों से भी निकट संपर्क रखा जाता है। वह कहते हैं कि जब एक बार खतरे की घंटी बज जाती है तो इसका अर्थ यह होता है कि संकट अपनी सीमा लांघने के बेहद करीब पहुंच चुका है। इस तथ्य से पता चलता है कि विश्व के कई हिस्से आज गंभीर दयनीय मानवीय परिस्थितियों से जूझ हैं लेकिन भारत उन संकटग्रस्त क्षेत्रों में शामिल नहीं है। इसका श्रेय देश के लोकतंत्र, शासन व्यवस्था और सामाजिक ताने-बाने को है।

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारत की छवि को जानबूझ कर नकारात्मक रूप में प्रस्तुत करने की कोशिशें लगातार होती रहती हैं। कभी मानवाधिकार के नाम पर, कभी अल्पसंख्यकों के नाम पर और कभी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर भारत को कटघरे में खड़ा करने का प्रयास किया जाता है। देश में हर दिन करोड़ों लोग बेखौफ होकर अपने काम पर जाते हैं, अलग-अलग धर्मों के लोग एक-दूसरे के साथ व्यापार करके ही आजीविका चलाते हैं, विभिन्न जाति-धर्म के बच्चे एक ही स्कूल में पढ़ते हैं और समाज में समरसता बनी हुई है। देश की इस तस्वीर पर हर किसी को गर्व होना चाहिए। इस परिदृश्य में सरकार की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। सरकार की ओर से कानून-व्यवस्था बनाए रखने से लेकर सामाजिक कल्याण योजनाओं के सफल क्रियान्वयन तक, प्रशासनिक की जवाबदेही से लेकर डिजिटल निगरानी तक हर काम किया जा रहा है। सरकारी तंत्र की निरतंर सक्रियता से ही कोई भी टकराव बड़े संकट का रूप नहीं ले पाता है। आतंकवाद के खिलाफ कठोर कार्रवाई, दंगों में तत्काल एक्शन, पीड़ितों को मुआवजा और दोषियों को सजा जैसी प्रक्रियाओं से जाहिर है कि देश में किसी भी स्तर पर किसी भी प्रकार की अराजकता को खुली छूट देने का सवाल ही उत्पन्न नहीं होता है। टकरावों से जूझ रहे विभिन्न देशों के बीच शांति, सह अस्तित्व, लोकतांत्रिक और संवैधानिक मूल्यों के साथ आगे बढ़ रहा भारत ऐसा देश है, जो हर देश को प्रेरणा देता है। दुनिया में किसी को भी संयम, शांति, विकास, सह जीवन और स्थिरता की मिसाल को महसूस करना हो तो वह भारत आए।

जलवायु परिवर्तन

बढ़ रहा वन्यजीवों से खतरा

● जय सिंह रावत

हिमालयी राज्य उत्तराखण्ड का समृद्ध वन्यजीव संसार राज्यवासियों के लिये संकट का कारण बनता जा रहा है। उत्तराखंड के पहाड़ अभी मानसून की विनाशकारी आपदाओं की मार से पूरी तरह उबरे भी नहीं थे कि जंगलों से सटे इलाकों में जंगली जानवरों का आतंक नई मुसीबत बनकर सामने आ गया। पौड़ी गढ़वाल, रुद्रप्रयाग, टिहरी, पिथौरागढ़ और चमोली जैसे जिलों में गुलदार, भालू और हाथियों के हमले इतने बढ़ गए हैं कि शाम ढलते ही गांवों में अघोषित कर्फ्यू जैसे हालात बन जाते हैं। कई स्कूल बंद कर दिये गये हैं। बच्चे स्कूल नहीं जा पाते, अभिभावक खुद ड्यूटी देते हैं। यहां तक कि शादी-ब्याह जैसे सामाजिक आयोजन भी स्थगित हो रहे हैं लेकिन खतरा सिर्फ इन बड़े शिकारियों तक सीमित नहीं है। बंदर, लंगूर और जंगली सूअर भी पहाड़ों में खेती को असंभव बना रहे हैं। अब तो बंदर भी हमलावर हो गये हैं। बंदरों द्वारा कई ग्रामीण गंभीर रूप से घायल हो चुके हैं। अब रही सही खेती छोड़ने की नौबत आ गई है क्योंकि कई पहाड़ी गांवों में दिन में भी खेतों की रखवाली करना अब जान जोखिम में डालने जैसा हो गया है। स्थिति इतनी गंभीर है कि गढ़वाल के संसद अनिल बलूनी और महेंद्र भट्ट ने यह मुद्दा संसद में भी उठाया है । गढ़वाल के संसद अनिल बलूनी और महेंद्र भट्ट ने केंद्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्री से मुलाकात कर बताया कि भालुओं के हमले पहली बार इतनी बड़ी संख्या में सामने आए हैं जो बेहद चिंताजनक संकेत है।

उत्तराखंड वन विभाग के रिकॉर्ड के अनुसार, राज्य के लगभग 490 गाँवों को मानव-वन्यजीव संघर्ष की दृष्टि से अत्यधिक संवेदनशील घोषित किया गया है। ये गाँव मुख्य रूप से वनों से घिरे पर्वतीय जिलों जैसे पौड़ी गढ़वाल, रुद्रप्रयाग, टिहरी, चमोली और नैनीताल आदि में स्थित हैं, जहाँ गुलदार, भालू, हाथी तथा बंदर और जंगली सूअर जैसे छोटे जानवरों से भी बार-बार टकराव की घटनाएँ होती रहती हैं। इस बढ़ते संघर्ष का सबसे बड़ा और गहरा कारण जलवायु परिवर्तन माना जा रहा है जो प्रकृति और मानव दोनों के लिए दोधारी तलवार बन चुका है।

जलवायु परिवर्तन की वजह से मौसम का पैटर्न पूरी तरह बदल गया है। तापमान बढ़ने, बारिश के समय और मात्रा में अनियमितता तथा सूखे और बाढ़ की बढ़ती घटनाओं ने जंगलों में भोजन चक्र को बुरी तरह प्रभावित किया है। जहां पहले कुछ महीनों में विशेष फल-फूल और शिकार उपलब्ध होते थे, अब

उनकी कमी या अनुपलब्धता के कारण गुलदार, भालू और हाथी भोजन की तलाश में गांवों की ओर खिंचे चले आ रहे हैं। प्रजनन काल भी बदल गया है जिससे ये जानवर पहले की तुलना में अधिक आक्रामक और लंबे समय तक सक्रिय रहते हैं। जलवायु परिवर्तन ने प्रवास के रास्ते और समय को भी अस्त-व्यस्त कर दिया है, जिससे जानवरों को नए क्षेत्रों में भटकना पड़ रहा है और मानव बस्तियां उनके रास्ते में आ रही हैं। वैज्ञानिक अध्ययन बता रहे हैं कि आने वाले दशकों में जलवायु परिवर्तन की वजह से उत्तराखंड में मानव-वन्यजीव संघर्ष और भी भयावह रूप ले सकता है क्योंकि जंगल सिकुड़ रहे हैं, भोजन कम हो रहा है और जानवरों का व्यवहार तेजी से आक्रामक होता जा रहा है।

इतना ही नहीं, मानव अतिक्रमण, सड़कों का जाल, हेलीकॉप्टरों की लगातार आवाजाही और कचरे के ढेर भी जानवरों को बस्तियों की ओर धकेल रहे हैं लेकिन इन सबमें जलवायु परिवर्तन सबसे बड़ा उत्प्रेरक है जो न सिर्फ आपदाओं की तीव्रता बढ़ा रहा है बल्कि सीधे तौर पर वन्यजीवों के व्यवहार को बदलकर मानव जीवन को खतरे में डाल रहा है। पलायन आयोग की रिपोर्टें पहले ही बता चुकी हैं कि पहाड़ों से पलायन के प्रमुख कारणों में वन्यजीवों का डर अब सबसे ऊपर है। जब खेती नहीं हो पा रही, मवेशी सुरक्षित नहीं और शाम को घर से निकलना भी जोखिम बन जाए तो गांव खाली होना स्वाभाविक है।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार पिछले 25 सालों में मानव वन्यजीव संघर्ष में 1264 से ज्यादा लोगों की जान जा चुकी है, 6519 से अधिक घायल हुए हैं और 7079 से ज्यादा हमले दर्ज हुए हैं। अकेले 2025 में ही 64 से अधिक परिवारों के चिराग बुझ चुके हैं। गुलदार सबसे खतरनाक साबित हो रहा है जिसने 546 जानें ली हैं। भालू और हाथी भी पीछे नहीं हैं। पौड़ी गढ़वाल में तो स्थिति यह है कि 55 से अधिक स्कूल बंद या समय बदल चुके हैं और भालू ने इस साल 53 पशुओं को मार डाला या घायल किया है।

इस भयावह स्थिति से निपटने के लिये प्रशासन की क्विक रिएक्शन टीमें हाई अलर्ट पर हैं, ड्रोन से निगरानी हो रही है, रेडियो कॉलरिंग की जा रही है, सौर बाड़ और खाइयां बनाई जा रही हैं, पटाखे और शोर करने वाले उपकरण बांटे जा रहे हैं। हिंसक जानवरों को ट्रैंक्विलाइज कर रेस्क्यू किया जा रहा है लेकिन ग्रामीणों का कहना साफ है कि ये अस्थायी उपाय हैं। जब तक जलवायु परिवर्तन के असर को गंभीरता से नहीं लिया जाएगा, जंगलों को बचाने और पुनर्जनन की बड़ी योजना नहीं बनेगी और स्थानीय समुदायों को वन्यजीव प्रबंधन में आर्थिक हिस्सेदार नहीं बनाया जाएगा, तब तक यह संघर्ष कम होने वाला नहीं। नामीबिया जैसे देशों के कम्युनल कंजर्वेंसी मॉडल से सीख लेकर अगर उत्तराखंड भी स्थानीय लोगों को वन्यजीवों से होने वाले लाभ का हिस्सा दे, तो शायद लोग जंगलों और जानवरों के दुश्मन की बजाय रक्षक बनें।

उत्तराखंड जैव विविधता का खजाना है। यहाँ 102 स्तनधारी, 600 पक्षी, 19 उभयचर, 70 सरीसृप और 124 मछलियों की प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इनमें से कई वैश्विक स्तर पर संकटग्रस्त हैं- जैसे बाघ, एशियाई हाथी, भूरा भालू, कस्तूरी मृग और हिम तेंदुआ। इन प्रजातियों का संरक्षण हिमालयी पर्यावरण के भविष्य के लिए अत्यंत आवश्यक है। किंतु मानव जीवन भी समान रूप से महत्वपूर्ण है। यदि मानव और वन्यजीवों के बीच संतुलन नहीं साधा गया तो न तो वन्यजीव सुरक्षित रहेंगे और न ही पहाड़ों का भविष्य।

आज उत्तराखंड एक ऐसे मोड़ पर खड़ा है जहां एक तरफ जलवायु परिवर्तन प्राकृतिक आपदाओं को बढ़ा रहा है, तो दूसरी तरफ वही जलवायु परिवर्तन वन्यजीवों को आक्रामक और भटकाव की ओर धकेल रहा है। गुलदार, भालू, हाथी से लेकर बंदर और सूअर तक, सभी अब मानव जीवन के लिये खतरा बनते जा रहे हैं। अगर अभी भी ठोस, दूरगामी और जलवायु-संवेदी नीति नहीं बनाई गई तो देवभूमि के गांव वीरान होते देर नहीं लगेगी। यह सिर्फ वन्यजीव संरक्षण या मानव सुरक्षा का सवाल नहीं बल्कि पूरे हिमालयी पारिस्थितिकी तंत्र और उस पर निर्भर सभ्यता के अस्तित्व का सवाल बन चुका है।

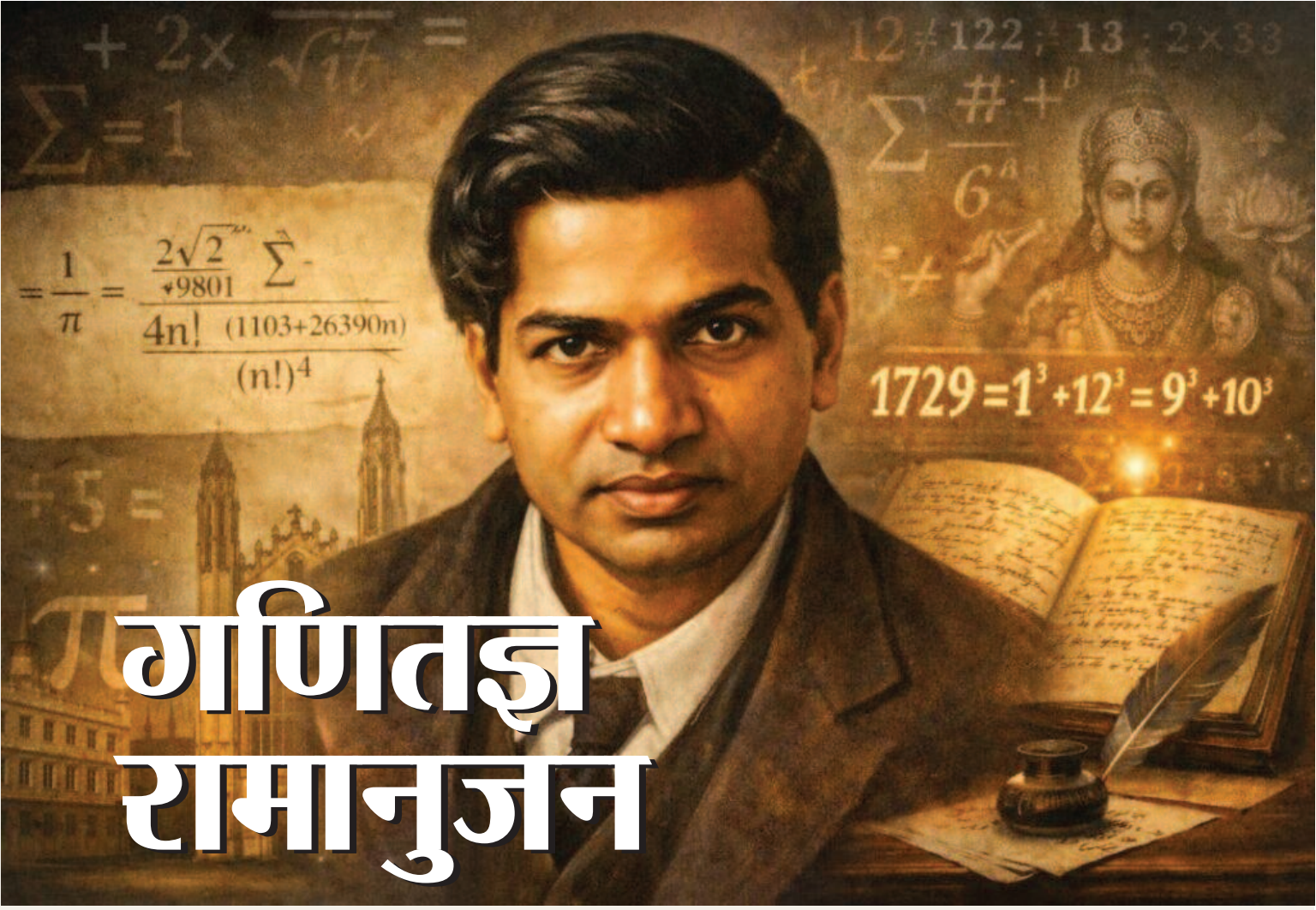

गणितज्ञ रामानुजन

जो अंकों, सूत्रों एवं प्रमेयों से खेलते थे

● **प्रमोद दीक्षित मलय**

लेख का आरम्भ आज से लगभग 125 साल पहले एक गांव के विद्यालय की कक्षा तीन की गणित की बेला के एक दृश्य से करता हूं। शिक्षक बच्चों से बातचीत करते हुए कहते हैं कि तीन केले यदि तीन लोगों में या एक हजार केलों को एक हजार लोगों में बराबर बांटा जाये तो प्रत्येक को एक-एक केला मिलेगा। अर्थात किसी दी हुई संख्या में उसी संख्या से भाग देने पर भागफल एक आता है। तभी एक बच्चे ने सवाल किया कि क्या शून्य को शून्य से भाग देने पर भी भागफल एक आयेगा। कक्षा में मौन पसर गया। इस बालक ने कक्षा पांचवीं में पूरे जिले में सर्वाधिक अंक प्राप्त कर अपने माता-पिता और विद्यालय को गौरवान्वित किया। इतना ही नहीं, कक्षा सातवीं में पढ़ते हुए कक्षा बारहवीं और बी.ए. के बच्चों को गणित पढ़ाया करता था।

आगे चलकर यही बालक विश्व का महान गणितज्ञ सिद्ध हुआ जिसे सभी श्रीनिवास रामानुजन आयंगर के नाम से जानते हैं और जिनके प्रमेय आधारित सूत्र गणितज्ञों के लिए आज भी रहस्य एवं अबूझ पहेली बने हुए हैं और शोधकार्य का आधार भी, तथा जिनके नाम पर रामानुजन अभाज्य, रामानुजन स्थिरांक सिद्धांत विश्व विश्रुत हैं। वास्तव में रामानुजन गणित की दुनिया के प्रखर भास्कर थे जिनके ज्ञान, मेधा और अंक शास्त्र की समझ से विश्व चमत्कृत है। वह गणितीय कर्म कौशल के फलक का कोहिनूर माणिक्य हैं। गणित के आकाश का दैदीप्यमान नक्षत्र हैं जिनकी आभा से गणित-पथ प्रकाशित है, जिनके महनीय अवदान से गणित-कोश समृद्ध, समुन्नत और सुवासित हुआ है।

रामानुजन का जीवन-पथ कंटकाकीर्ण था। तमाम अभावों और दुश्वारियों से जूझते हुए वह गणित के शोधकार्य में मृत्युपर्यन्त साधनारत रहे। अंतिम घड़ी तक रोगशैय्या पर पेट के बल लेटे औंधे मुंह वह गणित के सूत्र रचते रहे। रामानुजन का जन्म तमिलनाडु के निर्धन ब्राह्मण परिवार में पिता श्रीनिवास आयंगर के कुल में माता कोमलताम्मल की कोख से 22 दिसम्बर, 1887 को जनपद इरोड में हुआ था। पिता एक दूकान में मुनीम अर्थात खाता-बही लेखन का काम करते थे। एक वर्ष बाद पिता परिवार के साथ कुंभकोणम-आ गये। मजेदार बात यह कि बालक तीन वर्ष तक कुछ बोला ही नहीं। सभी समझे कि वह गूंगा है। पर आगे वाणी प्रस्फुटित हुई तो परिवार में खुशी छाई। रामानुजन का बचपन कुंभकोणम में बीता और यहीं पर ही प्राथमिक शिक्षा भी पूरी हुई। आगे

की शिक्षा के लिए टाउन हाईस्कूल में प्रवेश लिया। यहां पढ़ने का बेहतर वातावरण मिला। स्थूलकाय रामानुजन की आंखों में नया सीखने की उत्कट उत्कंठा की चमक थी। स्कूल के पुस्तकालय में त्रिकोणमिति आधारित सूत्रों की एक पुस्तक मिली। बालक रामानुजन उन सूत्रों को हल करने में जुटे रहते। न प्यास की चिंता न भोजन का ध्यान। सूत्रों को हल करने की ललक से रामानुजन गणितीय संक्रियाओं को समझने और हल करने में पारंगत हो गये। वह अंकों से खेलने लगे, उनके गुण-धर्मों पर सोचने लगे। पर इसके कारण अन्य विषयों के अध्ययन के लिए समय न बचता। फलतः वह अन्य विषयों में पिछड़ते गये। लेकिन हाईस्कूल उत्तीर्ण कर लिया और गणित एवं अंग्रेजी में अधिक अंक प्राप्त करने के कारण आगे के अध्ययन के लिए सुब्रमण्यम छात्रवृत्ति मिली और कालेज में 11वीं कक्षा में दाखिला ले लिया। यहां प्रोफेसर जार्ज शुब्रिज की गणित पुस्तक पढ़ी, जिससे गणित के प्रति रुचि प्रगाढ़ हुई।11वीं में गणित में सर्वोच्च अंक लाकर अन्य विषयों में अनुत्तीर्ण हो गये। छात्रवृत्ति बंद हो गई और कालेज छूट गया। परिवार की आर्थिक स्थिति डांवाडोल और जरूरतें मुंह बाये खड़ी थीं। गणित का ट्यूशन शुरू किया तो पांच रुपये महीना मिलने लगे। 1907 में बारहवीं की परीक्षा में व्यक्तिगत परीक्षार्थी के रूप में बैठे पर फिर अनुत्तीर्ण हो गये, हालांकि गणित में पूरे अंक प्राप्त किये। परिणाम यह हुआ कि कालेज हमेशा के लिए छुट गया।

1907 में बारहवीं की परीक्षा में व्यक्तिगत परीक्षार्थी के रूप में बैठे पर फिर अनुत्तीर्ण हो गये, हालांकि गणित में पूरे अंक प्राप्त किये। परिणाम यह हुआ कि कालेज हमेशा के लिए छुट गया।

अगले पांच वर्ष जीवन की कड़ी परीक्षा का काल था। पढ़ाई छूट चुकी थी, कोई काम-धंधा था नहीं। गणित में काम करने का असीम उत्साह तरंगें मार रहा था पर किसी विद्वान शिक्षक या प्रोफेसर का साथ नहीं था। ऐसे दुःसह विकट संकटकाल में एक भाव था जो रामानुजन को अनवरत ऊर्जा प्रदान कर रहा था और वह था ईश्वर के प्रति दृढ आस्था और विश्वास। कुलदेवी नामगिरि के प्रति अनंत असीम श्रद्धा और समर्पण भाव उनके हृदय को ज्योतित किए हुए था, जिसका उल्लेख रामानुजन ने प्रो. हार्डी के साथ बातचीत में करते हुए कहा था कि गणित में शोध भी मेरे लिए ईश्वर की ही खोज है। इसी दौरान 1909 में पिता ने 12 वर्षीय कन्या जानकी से रामानुजन का विवाह करवा दिया। अब पारिवारिक जिम्मेदारियां बढ़ गईं तो आजीविका की तलाश में मद्रास (अब चैन्नै) की राह पकड़ी। पर 12वीं अनुत्तीर्ण युवक को नौकरी पर कौन रखता। जैसे-तैसे एक साल गुजरा, स्वास्थ्य भी गिरने लगा तो कुंभकोणम-लौटना पड़ा। एक साल बाद फिर मद्रास लौटे। पर अबकी बार अपने गणित के शोधकार्य का रजिस्टर साथ लाये और रजिस्टर दिखाकर काम मांगने लगे। संयोग से एक शुभचिंतक ने रजिस्टर देखा तो रामानुजन को डिप्टी कलेक्टर से मिलने की सलाह दी। डिप्टी कलेक्टर वी रामास्वामी अय्यर स्वयं गणित के विद्वान थे। वह रामानुजन के काम से प्रभावित हुए और जिलाधिकारी रामचंद्र राव से अनुशंसा कर 25 रुपये मासिक मानधन का प्रबंध करवा दिया। इससे रामानुजन को आर्थिक झंझावात से आंशिक मुक्ति मिली और वे शोधकार्य में अधिक ध्यान देने लगे।

इसी अवधि में वह इंडियन मैथमेटिक्स सोसायटी में काम करते हुए उसके जर्नल के लिए प्रश्न बनाने और हल करने का काम भी करने लगे थे। इसी जर्नल में आपका 17 पृष्ठों का पहला शोध-पत्र 'बरनौली संख्याओं का गुण' प्रकाशित हुआ, जिसकी चतुर्दिक भूरि-भूरि प्रशंसा हुई। आगे मद्रास पोर्ट ट्रस्ट में क्लर्क के पद पर काम करने लगे। यह समयावधि रामानुजन के शोध के लिए उपयुक्त थी। रात भर स्लेट पर सूत्र बनाते, हल करते, फिर रजिस्टर पर उतारते और थोड़े आराम के बाद कार्यालय निकल जाते। अब एक गणितज्ञ के रूप में पहचान बनने लगी थी। मित्र की सलाह पर अपने काम को इंग्लैंड के गणितज्ञों के पास भेजा पर कोई महत्व न मिला। संयोग से 8 फरवरी, 1913 को एक पत्र प्रो. जी. एच. हार्डी को भेजते हुए उनके एक अनुत्तरित प्रश्न को हल करने के सूत्र खोजने का संदर्भ देकर अपने कुछ प्रमेय भी भेजे। पहले तो हार्डी ने पत्र पर ध्यान न दिया पर अपने शिष्य लिटिलवुड से परामर्श कर रामानुजन के काम की गम्भीरता समझी और रामानुजन को मद्रास विश्वविद्यालय से छात्रवृति दिला कालांतर में शोध हेतु अपने पास लंदन बुलवा कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में प्रवेश दिला दिया। दोनों साथ शोधकार्य करते रहे। यहां रामानुजन के कई शोध-पत्र प्रकाशित हुए।

ऐसे ही एक विशेष शोधकार्य पर कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय ने बी.ए. की उपाधि प्रदान की लेकिन वहां की जलवायु, रहन-सहन, खान-पान और सामाजिक व्यवहार से शमीर्ले, संकोची, आत्मनिष्ठ शाकाहारी रामानुजन तादात्म्य न बैठा सके। स्वयं भोजन पकाने और शोधकार्य के अत्यधिक मानसिक श्रम से शरीर क्षीण होने लगा। चिकित्सकों ने क्षय रोग बता आराम करने की सलाह दी। पर रामानुजन पर काम की धुन सवार थी। इसी काल में आपको रॉयल सोसायटी का फेलो चुना गया। आज तक सबसे कम उम्र में फेलो चुने जाने वाले वह पहले व्यक्ति थे और पहले अश्वेत भी। ट्रिनिटी कालेज से फेलोशिप पाने वाले पहले भारतीय बने। रोग बढ़ने के कारण आप 1919 में जन्मभूमि भारत लौट आये। मद्रास विश्वविद्यालय में प्रोफेसर नियुक्त हुए। पर स्वास्थ्य तेजी से गिरने लगा। रोग शैय्या पर लेटे-लेटे ही आप काम करते। कालपाश रामानुजन के प्राणों की ओर बढ़ रहा था। 26 अप्रैल, 1920 को गणित का यह जगमगाता दीप अपना प्रकाश समेट अनंत की यात्रा पर निकल गया।

रामानुजन का काम आज भी गणितज्ञों की परीक्षा ले रहा है। ट्रिनिटी कालेज के पुस्तकालय में 1976 में रामानुजन का हस्तलिखित 100 पन्नों का रजिस्टर मिला था जिसमें उनकी प्रमेय और सूत्र लिखे हैं। जिसे टाटा फंडामेंटल रिसर्च सेंटर ने रामानुजन नोटबुक नाम से प्रकाशित किया है। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर एक फिल्म 'द मैन हू न्यू इन्फिनिटी' भी बन चुकी है। भारत सरकार ने 1912 में 125वीं जयंती के अवसर पर रामानुजन पर डाक टिकट जारी करते हुए उनके जन्मदिन 22 दिसम्बर को गणित दिवस के रूप में मनाने की घोषणा की। 1962 में भी एक डाक टिकट जारी किया गया था। गूगल ने डूडल बनाकर अपना श्रद्धा भाव अर्पित किया। जब तक गणित है तब तक उनकी खोज 'रामानुजन संख्याएं' (1729, 4104, 39312 आदि), थीटा फलन और संख्या सिद्धांत पर उनका विशेष काम विद्यार्थियों को प्रेरित करता रहेगा। रामानुजन हमेशा गणित के पृष्ठों पर विद्यमान रहेंगे।

क्या भ्रष्टाचार का समाधान केवल कानून से संभव है?

● **डॉ.वीरेन्द्र भाटी मंगल**

राजस्थान की राजनीति में इन दिनों राजनेताओं से जुड़े भ्रष्टाचार की चर्चा व्यापक स्तर पर है। जब राजनीति से जुड़े लोग भ्रष्टाचार में लिप्त होते है तो लोकतंत्र की क्या दशा होगी, हम अंदाजा लगा सकते है। भ्रष्टाचार आधुनिक समाज की सबसे जटिल और गंभीर समस्याओं में से एक है। यह न केवल आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न करता है, बल्कि सामाजिक नैतिकता, लोकतांत्रिक मूल्यों और जनता के विश्वास को भी कमजोर करता है। सामान्यतः यह माना जाता है कि भ्रष्टाचार पर नियंत्रण के लिए कठोर कानून और सख्त दंड ही सबसे प्रभावी उपाय हैं किंतु प्रश्न यह उठता है कि क्या वास्तव में भ्रष्टाचार का समाधान केवल कानून से ही संभव है? इस प्रश्न पर गंभीरता से विचार करना आवश्यक है।

निस्संदेह, कानून भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने का एक महत्वपूर्ण साधन है। भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम, लोकपाल, सतर्कता आयोग, सीबीआई जैसी संस्थाएं तथा न्यायपालिका की सक्रिय भूमिका भ्रष्टाचार के मामलों को उजागर करने और दोषियों को दंडित करने में सहायक रही हैं। कानून का भय व्यक्ति को गलत कार्य करने से रोकने में कुछ हद तक प्रभावी भी होता है। जब दंड कठोर और प्रक्रिया पारदर्शी होती है, तो भ्रष्ट आचरण की संभावना कम होती है। इसलिए यह कहना गलत नहीं होगा कि कानून भ्रष्टाचार के विरुद्ध लड़ाई की आधारशिला है।

लेकिन केवल कानून पर्याप्त नहीं है, यह तथ्य व्यवहार में बार-बार सिद्ध हुआ है। अनेक सख्त कानूनों के बावजूद भ्रष्टाचार समाज के विभिन्न स्तरों पर विद्यमान है। इसका एक बड़ा कारण यह है कि कानून तब तक प्रभावी नहीं हो सकता, जब तक उसके क्रियान्वयन में ईमानदारी और निष्पक्षता न हो।

> **यह माना जाता है कि भ्रष्टाचार पर नियंत्रण के लिए कठोर कानून और सख्त दंड ही सबसे प्रभावी उपाय हैं किंतु प्रश्न यह उठता है कि क्या वास्तव में भ्रष्टाचार का समाधान केवल कानून से ही संभव है?**

यदि कानून लागू करने वाली संस्थाएं ही भ्रष्टाचार से ग्रस्त हों तो कानून मात्र कागजों तक सीमित रह जाता है। लंबी न्यायिक प्रक्रियाएं, राजनीतिक हस्तक्षेप और दंड में देरी भी कानून की प्रभावशीलता को कम कर देती हैं।

भ्रष्टाचार की जड़ें केवल कानूनी ढांचे की कमजोरी में नहीं बल्कि सामाजिक, नैतिक और मानसिक प्रवृत्तियों में भी निहित हैं। जब समाज में अनैतिक आचरण को मौन स्वीकृति मिलती है, रिश्वत को सिस्टम का हिस्सा मान लिया जाता है और व्यक्तिगत लाभ को सार्वजनिक हित से ऊपर रखा जाता है, तब कानून अकेला कुछ नहीं कर सकता। स्पष्ट है कि भ्रष्टाचार एक नैतिक संकट भी है। इस संदर्भ में नैतिक शिक्षा और मूल्यबोध की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। बचपन से ही ईमानदारी, उत्तरदायित्व, पारदर्शिता और सामाजिक कर्तव्य जैसे मूल्यों का संस्कार यदि परिवार और शिक्षा-प्रणाली के माध्यम से किया जाए तो भविष्य में भ्रष्ट आचरण की प्रवृत्ति स्वतः कम हो सकती है।

जिस समाज में ईमानदारी को सम्मान और भ्रष्टाचार को सामाजिक तिरस्कार मिले, वहां कानून को बार-बार कठोर होने की आवश्यकता नहीं पड़ती। इसके अतिरिक्त, प्रशासनिक सुधार भी भ्रष्टाचार-निवारण में अहम भूमिका निभाते हैं। प्रक्रियाओं का सरलीकरण, डिजिटल तकनीक का प्रयोग, ई-गवर्नेंस, सूचना का अधिकार, और पारदर्शी निर्णय-प्रणाली भ्रष्टाचार के अवसरों को कम करती है। जब मानवीय हस्तक्षेप घटता है और जवाबदेही बढ़ती है, तब रिश्वत और अनियमितताओं की गुंजाइश स्वतः सीमित हो जाती है।

जनभागीदारी और जागरूकता भी उतनी ही आवश्यक है। यदि नागरिक स्वयं भ्रष्टाचार के विरुद्ध खड़े हों, शिकायत दर्ज कराएं, और 'देने' के साथ-साथ 'लेने' से भी इंकार करें, तो व्यवस्था पर सकारात्मक दबाव बनता है। मीडिया, नागरिक समाज और सामाजिक आंदोलनों की सक्रियता भी भ्रष्टाचार को उजागर करने और जनमत तैयार करने में सहायक होती है। भ्रष्टाचार का समाधान केवल कानून से संभव नहीं है लेकिन कानून के बिना भी संभव नहीं है। कानून आवश्यक है, पर पर्याप्त नहीं। इसके साथ नैतिक शिक्षा, सामाजिक चेतना, प्रशासनिक सुधार, पारदर्शिता और नागरिक सहभागिता का समन्वय अनिवार्य है। जब कानून, नैतिकता और समाज तीनों एक साथ सक्रिय होते हैं, तभी भ्रष्टाचार पर वास्तविक और स्थायी नियंत्रण संभव हो पाता है।

स्पोर्टिंग मोमेंट्स 2025
हिम्मत, गौरव और विवाद

● **रोहित शर्मा**

2025 में खेल जगत में भावनात्मक ईमानदारी, उल्लेखनीय उपलब्धियों और अलग-अलग खेलों में परेशान करने वाले विवादों का एक दिलचस्प मिश्रण देखने को मिला। खासकर भारतीय क्रिकेट ने, एलीट खेल के मानसिक दबाव की एक दुर्लभ झलक दिखाई, जब पूर्व कप्तान रोहित शर्मा ने खुलासा किया कि 2023 वनडे वर्ल्ड कप फाइनल में ऑस्ट्रेलिया से भारत की दिल तोड़ने वाली हार के बाद उन्होंने गंभीरता से रिटायरमेंट के बारे में सोचा था। रोहित ने माना, ₹ऐसा लगा जैसे खेल ने मुझसे सब कुछ छीन लिया हो,₹ जो सबसे बड़े मंच पर मिली हार से लगे मनोवैज्ञानिक घावों को दिखाता है।

भारत की क्रिकेटिंग आत्मनिरीक्षण में, T20I कप्तान सूर्यकुमार यादव ने सार्वजनिक रूप से खराब फॉर्म के लंबे दौर को स्वीकार किया। पिछले एक साल में सिर्फ 12.84 की औसत से, 22 पारियों में कोई अर्धशतक नहीं बनाने वाले सूर्यकुमार ने माना कि यह मुश्किल दौर उम्मीद से ज्यादा लंबा खिंच गया है। हालांकि, उन्होंने आशावादी रुख अपनाते हुए विश्वास जताया कि 7 फरवरी से शुरू होने वाले भारत के T20 वर्ल्ड कप बचाव अभियान से पहले वह अपनी फॉर्म वापस पा लेंगे।

खासकर भारतीय क्रिकेट ने, एलीट खेल के मानसिक दबाव की एक दुर्लभ झलक दिखाई, जब पूर्व कप्तान रोहित शर्मा ने खुलासा किया कि 2023 वनडे वर्ल्ड कप फाइनल में ऑस्ट्रेलिया से भारत की दिल तोड़ने वाली हार के बाद उन्होंने गंभीरता से रिटायरमेंट के बारे में सोचा था।

वैश्विक टेनिस में, अमेरिकी किशोर लर्नर टिएन जेद्दा में नेक्स्ट जेन ATP फाइनल खिताब जीतकर सबसे होनहार युवा सितारों में से एक के रूप में उभरे। दुनिया के नंबर 28 खिलाड़ी ने फाइनल में बेल्जियम के अलेक्जेंडर ब्लॉकक्स को हराया, राउंड-रॉबिन चरण में शुरूआती झटके के बाद लचीलापन दिखाते हुए। टिएन की जीत ने उन्हें प्रतिष्ठित अंडर-20 टूर्नामेंट जीतने वाला सिर्फ तीसरा टॉप सीड खिलाड़ी बना दिया, जिससे ATP टूर पर भविष्य के दावेदार के रूप में उनकी प्रतिष्ठा मजबूत हुई।

इस बीच, लियोनेल मेस्सी की भारत यात्रा के दौरान फुटबॉल विवादों में घिर गया। आयोजकों ने खुलासा किया कि अर्जेंटीना के दिग्गज को दौरे के लिए ₹89 करोड़ का भुगतान किया गया था, जिसमें टैक्स सहित कुल खर्च ₹100 करोड़ तक पहुंच गया था। कोलकाता में एक उत्सव का कार्यक्रम अराजकता में बदल गया क्योंकि मैदान पर भीड़भाड़ के कारण प्रशंसक निराश हो गए, जिससे तोड़फोड़ हुई और कथित कुप्रबंधन की आधिकारिक जांच शुरू हुई।

बैडमिंटन ने खेल उत्कृष्टता का एक शुद्ध क्षण प्रदान किया क्योंकि दक्षिण कोरिया की एन सेयॉन्ग ने इतिहास रच दिया। BWF वर्ल्ड टूर फाइनल जीतकर, वह एक ही कैलेंडर वर्ष में पुरस्कार राशि में 1 मिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक कमाने वाली पहली बैडमिंटन खिलाड़ी बन गईं। यह खिताब उनके सीजन का 11वां खिताब था और 77 मैचों में 74 जीत की शानदार दौड़ का समापन था, जो विश्व मंच पर उनके प्रभुत्व को रेखांकित करता है।

अपने देश के करीब, खेल का संबंध शासन और अपराध से भी जुड़ा। तेलंगाना के टूरिज्म और कल्चर मंत्री, जुपल्ली कृष्णा राव ने घोषणा की कि हैदराबाद तूफान हॉकी टीम आने वाले हॉकी इंडिया लीग 2025-26 सीजन के दौरान राज्य के टूरिज्म और कल्चर के एंबेसडर के तौर पर काम करेगी। इसके बिल्कुल उलट, कबड्डी जगत में हिंसा से हड़कंप मच गया, जब खिलाड़ी-सह-प्रमोटर कंवर दिग्विजय सिंह, उर्फ राणा बालाचौरी की मोहाली में एक पुलिस स्टेशन के पास एक लाइव टूर्नामेंट के दौरान गोली मारकर हत्या कर दी गई। पंजाब पुलिस ने हत्या के सिलसिले में हरपिंदर सिंह, उर्फ मिड्डू को गिरफ्तार किया, जिससे ग्रासरूट खेलों में सुरक्षा को लेकर गंभीर चिंताएं सामने आईं।

यामी गौतम

ने साझा किया 'कामयाबी का मंत्र'

यामी गौतम अपनी खूबसूरती के साथ-साथ हमेशा अपनी एक्टिंग से सभी को इंप्रेस करती आई हैं। हर बार वो अपने किरदार से लोगों के दिलों-दिमाग पर छाप छोड़ देती हैं। फैंस उनकी एक्टिंग के दीवाने हैं।

यामी ने कन्नड़ फिल्म, 'उल्लासा उत्साहा' (2009) से फिल्मों में डेब्यू किया था। उसके बाद पंजाबी फिल्म 'एक नूर' (2011) और तेलुगु फिल्म 'नुव्वीला' (2011) करने के बाद उन्होंने फिल्म 'विक्की डोनर' (2012) से हिंदी सिने जगत में करियर की शुरूआत की। 7 नवंबर, 2025 को रिलीज इमरान हाशमी के लीड रोल वाली यामी गौतम की फिल्म 'हक' (2025) लोगों को काफी पसंद आ रही है। 40 करोड़ के बजट में बनकर तैयार हुई इस फिल्म ने अपनी निर्माण लागत निकालने के बाद काफी मुनाफा बनाया है।

यामी को लगता है कि अगर एक कलाकार को अपनी स्क्रिप्ट और किरदार पर भरोसा हो और वह अपने किरदार के लिए जी जान लगाने का माद्दा रखता है तो फिल्म को ऑडियंस के दिलों तक पंहुचने से कोई नहीं रोक सकता। यामी हमेशा कहती हैं कि उनकी कामयाबी का यही एक मात्र मंत्र है।

आयुष्मान खुराना के साथ फिल्म 'विक्की डोनर' (2012) के जरिए हिंदी सिने जगत में कदम रखते ही यामी गौतम की किस्मत बदल गई। पहली हिंदी फिल्म के बाद मिले तमाम ऑफर्स में अपनी काबिलियत साबित करते हुए उन्होंने इंडस्ट्री में स्थाई मुकाम बना लिया।

यामी गौतम ने अपने एक्टिंग करियर में कई फिल्मों में काम किया जिनमें से कुछ सिनेमाघरों में तो कुछ ओटीटी प्लेटफॉर्म पर रिलीज हुई। यामी ने अपने करियर में अब तक ज्यादातर हिट फिल्में ही दी हैं।

'सनम रे' (2016) के दौरान यामी गौतम और पुलकित के बीच अफेयर ने खूब चर्चा बटोरी थी लेकिन दोनों का यह रिश्ता, यामी के पेरेंट्स की वजह से टूट गया। वे नहीं चाहते थे कि उनकी बेटी किसी शादी शुदा शख्स के साथ शादी करे। यामी ने 4 जून, 2021 को 'उरी द सर्जिकल स्ट्राइकल' (2019) के डायरेक्टर आदित्य धर से शादी की। 10 मई, 2024 को वह बेटे वेदविद की मां बनी। मां बनने के पहले उनकी फिल्म 'आर्टिकल 370' (2024) रिलीज हुई।

विकसित भारत
विकसित उत्तर प्रदेश

ONE DISTRICT ONE CUISINE

व्यञ्जनेषु वसति संस्कृतिः

UTTAR PRADESH

उत्तर प्रदेश दिवस (24 जनवरी, 2026) के अवसर पर

एक जनपद-एक व्यञ्जन योजना लॉन्च

- प्रदेश के हर जनपद के विशिष्ट व्यंञ्जनों को मिलेगी नई पहचान
- पारंपरिक कारीगरों, हलवाइयों, छोटे उद्यमियों को स्थायी आजीविका के अवसर

प्रगति की गति अपार-डबल इंजन सरकार

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश

UPGovtOfficial | CMOUttarpradesh | CMOfficeUP

S.B. MOTORS

KISHANGANJ

ROYAL ENFIELD

प्रिय ग्राहक ...

किशनगंज रॉयल एनफील्ड द्वारा **एक नयी पहल**

अब आप घर बैठे अपनी Royal Enfield
मोटरसाइकिल की सर्विस करायें

घर और ऑफिस में रहकर
सर्विस का लाभ उठाएं

Open Time :-
9:00 a.m to 7:00 p.m

College Road (Near Imligola Chowk) Paschimpally, Kishanganj
Contact Number :- Sales - 7281885566 | Service - 7281885544